RNI नं. : 7387/63
मुद्रण तिथि : 15-16 जनवरी 2024
डाक प्रेषण तिथि : 15-17 जनवरी 2024
ISSN : 2456-611X

वर्ष : 61 अंक : 19
मूल्य : ₹10/- पृष्ठ संख्या : 80
डाक पंजीयन संख्या : BIKANER/022/2024-26
Office Posted At R.M.S., Bikaner

राम चमकते भानु समाना

श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन संघ का मुखपत्र

श्रमणोपासक

धार्मिक पाक्षिक

2023 24

राम चमकते भानु समाना

सुविचार

विश्वास पर कितने भी आघात हो जाएँ,
दुनिया से विश्वास हट नहीं सकता।
विश्वास ने जितने आघातों को सहा,
क्या मनुष्य उतने आघात सह पाता है?

समुद्र और सज्जन इस मायने में समान हैं
कि वे मर्यादा नहीं छोड़ते।

ठोस व्यक्ति की आवाज में
ताकत होती है।

अहिंसा परमो धर्मः

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

।।आगमवाणी।।

अगोअत्थस्स वयणेणं अमयंपि न घुंटए।

-गच्छाचारपइण्णा (46)

अगीतार्थ-अज्ञानी के कहने से अमृत भी नहीं पीना चाहिए।

One must not drink even the elixir at the behest of the ignorant.

किं एत्तो लट्ठयरं अच्छेरतरं च सुंदरतरं च?
चंदमिव सव्वलोगा बहुस्सुयमुहं पलोएंति।।

-चन्द्रवेध्यक (81)

इस (लोक) में बहुत अधिक विस्मयजनक, सुंदर और बलशाली होने से क्या (लाभ)? (क्योंकि) संपूर्ण जगत् में (लोग) चंद्रमा की तरह बहुश्रुत (अर्थात् विद्वान्) के मुख को देखते हैं (अर्थात् विद्वान् को सम्मान देते हैं)।

What is the use of being very handsome, powerful and miraculous here? Because everyone looks at the face of the learned, meaning that they honour the learned.

इह भविए वि नाणे, परभविए वि नाणे, तदुभये वि नाणे।

-भगवतीसूत्र (1/1)

ज्ञान का आलोक इस जन्म, परजन्म और कभी-कभी दोनों जन्मों में भी रहता है।

The radiance of knowledge lightens this world and the next and, at times, both.

पढमं नाणं तओ दया।

-दशवैकालिक (4/10)

पहले ज्ञान होना चाहिए, फिर उसके अनुसार दया अर्थात् आचरण।

The knowledge comes first then the conduct.

णाणुज्जोवो जोवो णाणुज्जोवस्स णत्थि पडिघादो।
दीवेइ खेत्तमप्पं सूरो णाणं जगमसेसं।।

-अर्हत्प्रवचन (19/47)

ज्ञान का प्रकाश ही सच्चा प्रकाश है, क्योंकि ज्ञान के प्रकाश की कोई रुकावट नहीं है। सूर्य थोड़े क्षेत्र को प्रकाशित करता है, किंतु ज्ञान पूरे संसार को।

The Radiance of knowledge is the true radiance because nothing can stop the light of knowledge. The sun can light only a limited space but the light of knowledge lights up the entire universe.

साभार- प्राकृत मुक्तावली

राम चमकते भानु समाना

अनुक्रमणिका

धर्मदेशना

08 शुद्ध देव, गुरु और धर्म का स्वरूप -आचार्य श्री जवाहरलाल जी म.सा.

10 मैं अनुशासक आचार्य हूँ -आचार्य श्री नानालाल जी म.सा.

15 आगमधर गुरु समकिती -आचार्य श्री रामलाल जी म.सा.

ज्ञान सार

19 मधुर वचन -संकलित

23 श्रीमत् प्रज्ञापनासूत्र -कंचन कांकरिया

25 श्रीमद् उत्तराध्ययनसूत्र -सरिता बैंगानी

तत्त्वज्ञान

27 जीव राशि का आगमिक स्वरूप -संकलित

भक्ति रस

22 आचार्य संघ आधार -राखी अलिझाड़

46 राम शरण सुखदाई -ललित कटारिया

58 गुरु गुण गाऊँ -देवेंद्र भंसाली

संस्कार सौरभ

38 धर्ममूर्ति आनंदकुमारी -संकलित

44 पश्चात्ताप से प्रायश्चित्त तक -आचार्य श्री नानालाल जी म.सा.

47 भूल को सुधारने का मिले अवसर -गौतम पारख

50 धर्मसंघ एवं मानवजाति के संवाहक.... -पदमचन्द गाँधी

54 दीप सा प्रकाशित जिनशासन -सुरेश बोरदिया

57 गुणपरक दृष्टि -मुस्कान जैन

59 समर्पण की झलक -अनुपमा ढड्ढा

61 आचार्य पद की महत्ता -डॉ. आभाकिरण गाँधी

विविध

42 बालमन में उपजे ज्ञान -मोनिका जय ओस्तवाल

63 गुरुचरण विहार -महेश नाहटा

आगम के आदर्श में झाँकें

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

आचार्य भद्रबाहु स्वामी का संक्षिप्त जीवन वृत्त पढ़ रहा था। वराहमिहिर व्यंतर द्वारा उपसर्ग करने पर आचार्यश्री ने उवसग्गहर स्तोत्र की रचना की। उस प्रसंग से बताया गया कि अभिमंत्रित जल के छिड़कने से उपस्थित लोगों के संकट दूर हो गए। जल मंत्रित करना, छिड़कना आदि क्रियाएँ साध्वाचार से कुछ हट कर हैं। आचार्य श्री भद्रबाहु स्वामी ने वैसा किया हो, विश्वास नहीं होता। कदाचित् मान लें कि वैसा किया हो तो क्या आज के साधुओं को उनकी नकल करके वैसी प्रवृत्तियाँ करनी चाहिए? विचार करें आचार्य भद्रबाहु के समक्ष संघ पर भारी विपदा थी, उसका निवारण अनिवार्य था। क्या आज वैसा संकट संघ पर है? दूसरी बात, वे पूर्वधर थे, आगम व्यवहारी थे, वे अपने ज्ञान-बल से कुछ भी करें, वह अन्य के लिए उपादेय नहीं हो सकता। आज के संत आगम व्यवहारी नहीं हैं। लवबिंदु ज्ञान के बल पर वे नकल करें, यह योग्य नहीं है। ऐसे संत आने वाले समय में स्थूलिभद्र स्वामी की नकल करने लगें कि उन्होंने कोशा के यहाँ चातुर्मास किया, हम क्यों नहीं कर सकते? उन्हें ध्यान में लेना चाहिए कि उस समय भी उनकी देखा-देखी करने वाले साधु का क्या हश्र हुआ? अतः साधुओं को महाज्ञानी-महागीतार्थी की देखा-देखी नहीं करनी चाहिए। उन्हें अपनी मर्यादा में ही रहना चाहिए। स्थविर कल्पी मुनियों के लिए जो समाचारी हैं, आगम-निर्देश हैं, उन्हीं का उन्हें पालन करना चाहिए। पूर्वाचार्यों के नाम से अपनी क्रियाओं को, अपने व्यवहार को सिद्ध करने का आत्मघाती प्रयत्न नहीं करना चाहिए। वैसा करने से हम उन महापुरुषों की मूल्यवत्ता को हानि पहुँचाने के अलावा और क्या कर सकते हैं।

आज हम अंतरावलोकन करें कि हम जो कर रहे हैं उसमें हमारा क्या लक्ष्य है? कहीं हम लोकैषणा, आत्म-प्रतिष्ठा के कारण तो वैसा व्यवहार नहीं कर रहे हैं? हम आगमों के आदर्श में झाँककर देखें कि हमारे क्रिया-कलाप कितने आत्म हितकर हैं? हम साधु बने हैं, हमारी साधुता बनी रह जाए, यही हमारा मुख्य उद्देश्य होना चाहिए।

कार्तिक कृष्ण 6, रविवार, 01-11-2015

साभार- ब्रह्माक्षर श्रमणोपासक

Peep Into The Ideal of 'Agam' (Jain Scripture)

-Param Pujya Acharya Pravar 1008 Shri Ramlal Ji M.Sa.

I was perusing a compendium of Acharya Bhadrabahu Swami's biography. Upon being visited with affliction caused by Varahamir 'Vyantar' (celestial being), Acharya Shree composed Uvassagahar Stotra' (a philosophical hymn or psalm in praise of the 23rd Tirthankar, Parshvanath— believed to help with tiding over hardships and miseries if recited with faith). Apropos that incident it was narrated that, upon sprinkling of water sanctified with chants, people present were relieved of their sufferings.

Now, sanctification of water, and rites of sprinkling it, are at variance with the ascetics' code of conduct. It is hard to believe that Acharya Bhadrabahu Swami would have done any such thing. Even assuming that he had done so, would it behove the ascetics of this day and age to imitate him and engage in such acts? Do reflect that Acharya Bhadrabahu had found the Sangh in a calamitous state, and it was essential to redeem it. Is the Sangh today in such dire straits? Next, he was a 'purvadhar' (or, a great Acharya who had knowledge of 'purvas', that is, pre-Agam scriptures), and his conduct conformed to the scriptures; whatever he did with the power of his knowledge cannot be 'upadeya' (or, worth imbibing) for others.

The ascetics of this age do not conduct themselves in a manner that is in consonance with the Agams. Imitation on the back of a modicum of knowledge would not be appropriate. In the times to come, such ascetics would imitate Sthulbhadra Swami by recalling that he had observed Chaturmas at the abode of the 'kosha' (a beautiful dancing girl of his time). “So why can't we do likewise?” they argued.

They ought to bear in mind the fate that befell the ascetics of those times who set out to ape him. As such, ascetics may not blindly imitate men of great learning, and those versed in the scriptures. They ought to keep within their bounds of propriety. They must follow only the vows prescribed for 'Sthavirkalpi Munies' (that is, junior and senior monks), and the teachings of Agam (scriptural texts). They may not make the suicidal attempt of justifying their actions, their conduct under the pretext of following the earlier preceptors. By so doing, we only end up undermining the worth of those great men.

Let us introspect today as to what our objective is in doing what we are doing. Is our conduct motivated by a desire for worldly fame, for prestige? Let us look closely at the ideals set out in the scriptures, and decide whether our activities make for the well-being of our self. We have become ascetics, and our asceticism must remain intact - this ought to be our main objective.

Sunday, 01-11-2015

Courtesy- Brahmakshar

अजीब परंपरा में
क्या हम भी शामिल?

सुनहरी कलम से....

स्वागत तारीखों का कुछ ऐसा हुआ।
परिवर्तनों का जैसे एक सिलसिला हुआ।।
अंधकार में ना जाने कैसी नई शुरुआत है।
बेगाने से साल का अनजाना सा स्वागत,
अजीब सी कुछ ये बात है।।

प्रतिवर्ष 31 दिसंबर को रात 12 बजे जबरन अंधकार को रोशनी देने की नादान गुस्ताखी मानव द्वारा की जाती है। यह एक कटु सत्य है कि रात के तम को जरा भी कमजोर या शिथिल करने की शक्ति किसी में नहीं है। फिर क्यों नए वर्ष का ऐसा स्वागत? क्या हम कुछ घंटे रुककर एक सुनहरी सुबह का इंतजार नहीं कर सकते? जो अपने आप में एक नई शुरुआत का संदेश तरोताजगी से लाती है। सूर्य की हर एक किरण रात के अंधकार को चीरकर सुनहरे भोर की ओर कदम बढ़ाती है। जब प्रकृति कदम-कदम हमारे हर एक अवसर को प्रफुल्लित, आकर्षक बनाने में हमारे साथ है तो क्या हम कुछ घंटों का इंतजार नहीं कर सकते?

इंतजार.... तो शब्द मात्र रह गया है, जिसे शायद किसी विवरण, लेखन की आवश्यकता नहीं है। इंतजार नहीं करने की स्थिति में हजारों दर्दनाक घटनाएँ इतिहास के पन्नों पर खून से लिखी हैं। इंतजार नहीं करने की स्थिति में कई गलतफहमियाँ जन्म लेती हैं। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है। इंतजार नहीं करने की स्थिति में हम परिणाम को छूकर निकल जाते हैं, पर परिणाम हासिल नहीं कर पाते। इंतजार नहीं करने की स्थिति में हम कई अपूर्व अवसरों से चूक जाते हैं।

यहाँ समझने योग्य मुख्य बिंदु यह है कि जीवन में सही समय का इंतजार आवश्यक है, जो कि **'सब्र का फल मीठा होता है'** उक्ति को चरितार्थ करता है। फिर चाहे वह नववर्ष मनाने के लिए नए वर्ष की सुबह का इंतजार हो या नवजीवन शुरू करने के लिए एक सुबह का इंतजार हो। जब प्रकृति ने अपनी इतनी सुंदर व्यवस्था बिठाई है तो हम क्यों उस व्यवस्था से छेड़छाड़ करें।

अपने जीवन में प्रत्येक नई शुरुआत सूर्य की पहली किरण से करें, चाहे वह नववर्ष हो, नवजीवन हो या जन्मदिवस हो। यही तो हमारी परंपरा है। आज भी मैं यह तथ्य उजागर करना चाहूँगी कि लोग ऊगते सूर्य को नमन करते हैं, न कि डूबे हुए सूर्य को। ये सही परंपरा ही धर्म उन्नायक बनेगी।

इन्हीं शुभभावनाओं के साथ...

जय नानेश! जय रामेश!

-सह-संपादिका

शुद्ध देव, गुरु और धर्म का स्वरूप

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री जवाहरलाल जी म.सा.

अट्ठदश दोस रहिओ, देवो धम्मो विनिउण दयासहिओ।
सुगुरुविबम्भयारी, आरम्भ परिग्गहा विरओ।।

भावार्थ- अष्टादश प्रकार के दोषों से रहित हैं वे शुद्ध देव हैं, दया सहित जो विशुद्ध ब्रह्मचारी और आरंभ-परिग्रह से रहित हैं, वे शुद्ध गुरु हैं और जो अपनी व पर की दया करने का बोध देता है, वह शुद्ध धर्म है।

देव में जो अठारह दोष नहीं होते वे इस प्रकार हैं- (1) अज्ञान, (2) क्रोध, (3) मद, (4) मोह, (5) माया, (6) लोभ, (7) रति, (8) अरति, (9) निद्रा, (10) शोक, (11) असत्, (12) अदत्त, (13) ईर्ष्या, (14) भय, (15) इहलोक का भय, (16) परलोक का भय, (17) प्राणीवध और (18) क्रीड़ा-प्रसंग। इन दोषों का जिनमें अभाव हो गया है, वे ही शुद्ध देव हैं।

अठारह दोषों की गणना कुछ आचार्यों ने इस प्रकार भी की है। यथा- (1) दानान्तराय, (2) लाभान्तराय, (3) भोगान्तराय, (4) उपभोगान्तराय, (5) वीर्यान्तराय, (6) हास्य, (7) रति, (8) अरति, (9) भय, (10) शोक, (11) जुगुप्सा, (12) दुर्गुच्छा, (13) काम, (14) मिथ्यात्व, (15) अज्ञान, (16) निद्रा, (17) राग-द्वेष एवं (18) अव्रत। इन दोषों से रहित महापुरुष देवाधिदेव ही शुद्ध देव हैं, जिनको जैन सिद्धांतकारों ने अरिहंत या तीर्थंकर के संबोधन से संबोधित किया है। इनमें किसी व्यक्ति विशेष का नाम-निर्देश या पक्षपात नहीं है। ऐसे दोषों से बचे हुए महापुरुष, जो अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत चारित्र और अनंत वीर्य रूप अनंत चतुष्टय तथा अष्ट महाप्रतिहार्य से सुशोभित, परम धर्म के उपदेष्टा हैं, वे ही शुद्ध देव हैं। उनके प्रति दृढ़ विश्वास रखना शुद्ध देवता का श्रद्धान कहलाता है।

गुरु के लक्षण बताते हुए ऊपर की गाथा में कहा कि *''सुगुरुविबम्भयारी, आरम्भ परिग्गहा विरओ''* यानी विशुद्ध नववाड़ सहित ब्रह्मचर्य को धारण करने वाले और सर्वथा आरंभ-परिग्रह से विरक्त पंच महाव्रतों का त्रिकरण शुद्धि से पालन करते हों तथा ईर्यादि पाँच समिति का सेवन करने वाले, तीन प्रकार की गुप्तियों द्वारा आत्मा को गोपने वाले, शुद्ध आत्मतत्त्व की गवेषणा करने वाले और आप्त वचनों अर्थात् निर्ग्रंथ प्रवचनों को आगे करके प्रवर्तन वाले हैं, घोरातिघोर परीषहों और उपसर्गों से भयभीत न होकर धीर, वीर, गंभीर हैं, वे ही महापुरुष शुद्ध देव और शुद्ध धर्म तत्त्व की पहचान कराने में समर्थ होते हैं। ऐसे गुणयुक्त गुरु जिस गच्छ, संप्रदाय या समाज में हों, वे ही आदरणीय हैं।

अन्यथा बहुत से मनुष्य साधु का वेश धारण करके भी इन गुणों में नहीं प्रवर्तते अर्थात् वे एक घर त्याग कर दूसरे घर में अपना प्रतिबंध सुदृढ़ बना लेते हैं और आरंभ-परिग्रह में तल्लीन बन जाते हैं। वे अपनी महिमा, पूजा, बढ़ाने के लिए नए-नए आविष्कार करते हैं तथा अपनी पेट भराई व स्वार्थपूर्ति में कमी न रहे इसलिए गृहस्थों को रास्ते की सेवा का महालाभ बताकर साथ में रखते हैं। वे गृहस्थों का बनाया हुआ आहारादि भोगते हैं व अपने सिवाय अन्य सबको कुपात्र कहकर करुणादान का निषेध करते हैं। वे अनुकंपा कर प्राणीरक्षा करने में पाप का बंध बताते हैं,

माता-पिता, पति आदि की सेवा करने में पाप बताते हैं तथा हिंसापूर्ण सावद्य प्रवृत्ति को धर्म बताते हैं। शास्त्रकार ने उन्हें द्रव्यलिंगी एवं अनाथ कहा है। वे अपना व पर का कल्याण नहीं कर सकते, परंतु जिस गच्छ, संप्रदाय या समाज के आचार्य, उपाध्याय व साधु शुद्धाचरण का पालन करने वाले विपरीत प्ररूपणा रूप मिथ्यात्व मल से रहित और सम्यक् ज्ञान के धारक हैं एवं जो संयम, तप तथा आहार-विहारादि प्रवृत्ति का संपूर्ण विधिपूर्वक पालन करते हैं, जरा भी माया का सेवन नहीं करते हैं, जिनकी सरलतापूर्ण प्रवृत्ति है, वे ही शुद्ध गुरु हैं।

शुद्ध धर्म का निरूपण करते हुए शास्त्रकार ने कहा है- **''धम्मोऽवि निउणदया सहिओ''** यानी जिस धर्म में स्व और पर दया का निरूपण पूर्णरूपेण किया जाता हो वही शुद्ध धर्म है। यहाँ स्वदया और परदया से मतलब है अपनी आत्मा को मिथ्यात्वादि पापों से बचाना और सम्यक्तया आत्मगुणों का विकास करते हुए इसे कर्मबंधन से दूर रखना स्वदया है यानी आत्मानुकंपा है और दूसरे जीवों (प्राणीमात्र) की रक्षा करना, उनके दुःखों को दूर करना या दुःख दूर करने की भावना रखना, परदया यानी परानुकंपा है। श्रीमद् सूत्रकृतांग सूत्र में कहा है कि **''दाणाण सेठं अभयप्पयाणं''** अर्थात् भय पाते हुए प्राणी को अभय देना सब दानों में श्रेष्ठ दान है। भय अनेक प्रकार का है। उन सब में मरण का भय बड़ा है। जो मरते हुए को बचाकर अभय बना देता है और भय से मुक्त करता है, वही श्रेष्ठ दान है। श्री प्रश्नव्याकरण सूत्र में भी प्रथम संवर द्वार में कहा है- **''सव्वजग जीव रक्खण दयट्ठयाए पावयणं भगवया सुकहियं''** अर्थात् संसार के सभी प्राणियों की रक्षा रूप दया के लिए ही तीर्थंकरों ने प्रवचन किया है। इन सब से स्वदया और परदया से भाव जिस धर्म द्वारा पैदा हों, उसे ही आप्त पुरुषों ने धर्मतत्त्व कहा है।

इन तीनों तत्त्वों का लक्षण संक्षेप में बताते हुए शास्त्रकार ने सम्यक्त्व ग्रहण करने की विधि इस प्रकार बताई है-

अरिहंतो महदेवो, जावज्जीवं सुसाहुणो गुरुणो।
जिणपण्णत्तं तत्तं, इहसम्मत्तं मए गहियं।।

भावार्थ- अरिहंत भगवान जिन्होंने चार घाती कर्मों का नाश करके अनंत चतुष्टय को प्राप्त कर लिया है, देव जिनाज्ञा में प्रवर्तने वाले सुसाधु, गुरु और केवली प्ररूपित शुद्ध दयामयी धर्म की श्रद्धान रूप इस सम्यक्त्व को मैं ग्रहण करता हूँ।

साभार- जवाहर किरणावली-7
(सम्यक्त्व पराक्रम भाग 1-2) श्रमणोपासक

रचनाएँ आमंत्रित

500-1000 शब्द सीमा

आप संघ के मुखपत्र के नियमित पाठक हैं यह हमारे लिए हर्ष का विषय है। श्रमणोपासक के धार्मिक अंक विभिन्न विषयों पर आधारित होते हैं। आगामी धार्मिक अंक **'नमो आयरियाणं (आचार्य पद की महत्ता, आवश्यकता, आचार्य की विशेषताएँ एवं आचार्य के 36 गुण इत्यादि)'** पर आधारित रहेगा।

सम्माननीय पाठकगण अपनी रचनाएँ शीघ्रातिशीघ्र भिजवाने का लक्ष्य रखें। यदि आपके पास श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन संघ द्वारा साधुमार्गी परिवारों को जारी M.I.D. (ग्लोबल कार्ड) नं. हो तो उसका उल्लेख अवश्य ही करें। प्राप्त मौलिक एवं सारगर्भित रचनाओं को समाहित करने का लक्ष्य रहेगा। विषय सन्दर्भित आपकी रचनाएँ- लेख, कविता, भजन, कहानी आदि **मो.: 9314055390, email : news@sadhumargi.com** पर हिन्दी व अंग्रेजी में सादर आमंत्रित हैं। उल्लेखित विषयों के अलावा भी आपकी सारगर्भित रचनाएँ भी आमंत्रित हैं।

-श्रमणोपासक टीम

मैं अनुशासक आचार्य हूँ

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री नानालाल जी म.सा.

"चरणकरणानुयोग, धर्मकथानुयोग, द्रव्यानुयोग व गणितानुयोग रूप चारों अनुयोगों के ज्ञान को मैं धारण करता हूँ एवं चतुर्विध संघ (साधु, साध्वी, श्रावक व श्राविका) के संचालन में अपना सामर्थ्य नियोजित रखता हूँ।"

मैं अनुशासक आचार्य हूँ-संघ का अनुशासन मेरा दायित्व है। मैं पाँच प्रकार के आचार का स्वयं कठिनता से निष्ठापूर्वक पालन करता हूँ तथा संघ के सभी साधुओं से उस आचार का उसी रीति से पालन करवाने की चेष्टा में रत रहता हूँ। चरणकरणानुयोग, धर्मकथानुयोग, द्रव्यानुयोग तथा गणितानुयोग रूप चारों अनुयोगों के ज्ञान को मैं धारण करता हूँ एवं चतुर्विध संघ (साधु, साध्वी, श्रावक व श्राविका) के संचालन में अपना सामर्थ्य नियोजित रखता हूँ। मैं स्वयं आचार्य पद की अभिलाषा नहीं करता हूँ, किंतु मेरे आचार्य गुरु जब मेरे जीवन में वैसी योग्यता का सद्भाव देखते हैं और मुझे इस पद के लिए मनोनीत करते हैं, तब मेरा परम कर्त्तव्य हो जाता है कि मैं उनके द्वारा तथा चतुर्विध संघ की पूर्ण सहमति के आधार पर अपने मनोनयन के बाद संघ की संचालन-व्यवस्था में अपने दायित्व का पूर्ण नम्रता एवं निष्ठा से निर्वाह करूँ।

यों आचार्य तीन प्रकार के माने गए हैं- शिल्पाचार्य, कलाचार्य तथा धर्माचार्य, किंतु मैं धर्माचार्य के रूप में दायित्वधारी होता हूँ। धर्माचार्य स्वयं श्रुतधर्म का पालन करने वाला, दूसरों को उसका उपदेश देने वाला संघ का नायक होता है और उसकी सेवा पारलौकिक हित-कर्मनिर्जरा आदि के लिए की जाती है। वीतराग देवों ने आचार्य पद में तीन प्रकार की ऋद्धि का निर्देश दिया है-

(1) ज्ञानऋद्धि - विशिष्ट श्रुत की संपदा,

(2) दर्शनऋद्धि - आगमों में शंका रहित होकर प्रवचन की प्रभावना वाले शास्त्रों का ज्ञान एवं

(3) चारित्रऋद्धि - अतिचार रहित शुद्ध तथा उत्कृष्ट चारित्र का पालन।

इसी दृष्टि से यह भी निर्देशित किया गया है कि धर्माचार्य की पूर्ण विनय-भक्ति की जाए, जो इस प्रकार हो- धर्माचार्य को देखते ही उन्हें वंदना-नमस्कार करना, सत्कार-सम्मान देना यावत् उनकी उपासना करना, प्रासुक-एषणीय आहार-पानी का प्रतिलाभ देना एवं पीढ़, फलग, शय्या, संथारे के लिए निमंत्रण देना। तदनुसार आचार्य के भी छह कर्त्तव्य निर्धारित किए गए हैं-

(1) सूत्रार्थ स्थिरीकरण - सूत्र के विवादग्रस्त अर्थ का निश्चय करना और सूत्र एवं अर्थ में चतुर्विध संघ को स्थिर करना।

(2) विनय - सबके साथ विनम्रता का व्यवहार करना।

(3) गुरुपूजा - अपने से दीक्षावृद्ध यानी स्थविर साधुओं की भक्ति करना।

(4) शैक्षबहुमान – शिक्षा ग्रहण करने वाले तथा नवदीक्षित साधुओं का सत्कार करना।

(5) दानपति श्रद्धावृद्धि – दान देने में दाता की श्रद्धा में अभिवृद्धि करना।

(6) बुद्धिबलवर्धन – अपने शिष्यों की विवेक-बुद्धि एवं आध्यात्मिक शक्ति को बढ़ाना।

आचार्य पद में छत्तीस गुणों के सद्भाव का उल्लेख है। आठ संपदाएँ तथा प्रत्येक के चार-चार भेद होने से बत्तीस एवं विनय के चार भेद मिलाने से कुल छत्तीस गुण होते हैं। अन्य अपेक्षा से ज्ञानाचार, दर्शनाचार एवं चारित्राचार के प्रत्येक के आठ-आठ भेद होने से चौबीस तथा बारह तप मिलाकर छत्तीस गुण बताए गए हैं। एक अन्य अपेक्षा से आठ संपदा, दस स्थिति कल्प, बारह तप और छह आवश्यक – कुल छत्तीस गुण कहे गए हैं।

आचार्य की आठ संपदाएँ इस प्रकार मानी गई हैं-

(1) आचार संपदा – चारित्र की दृढ़ता का सद्भाव। इसके चार भेद हैं –

(अ) संयमी-क्रियाओं में ध्रुवयोग युक्त होना,

(ब) गर्व रहित होकर सदा विनीत भाव से रहना,

(स) अप्रतिबद्ध विहार करते रहना व

(द) गंभीर विचार एवं दृढ़ स्वभाव रखना। अल्प उम्र हो, तब भी गुरु गंभीर रहना।

(2) श्रुत संपदा – श्रुत ज्ञान रूप शास्त्रों का पूर्ण ज्ञान। इसके भी चार भेद हैं-

(अ) बहुश्रुत अर्थात् शास्त्र ज्ञानी, पदार्थों के यथार्थ स्वरूप के दृष्टा तथा प्रचार में समर्थ,

(ब) परिचित श्रुत अर्थात् शास्त्रों की पूर्ण स्मृति, उच्चारण शुद्धि तथा स्वाध्याय का अभ्यास,

(स) **विचित्र श्रुत-** अपने और दूसरे मतों को जानकर शास्त्रों का तुलनात्मक ज्ञान, सोदाहरण मनोहर व्याख्यान और श्रोताओं पर प्रभाव व

(द) **घोषविशुद्धि श्रुत-** शास्त्र का उच्चारण करते समय उदात्त, अनुदात्त, स्वरित, ह्रस्व, दीर्घ आदि स्वर-व्यंजनों पर पूरा ध्यान हो।

(3) शरीर संपदा – देह का प्रभावशाली एवं सुसंगठित होना। इसके भी चार भेद हैं-

(अ) **आरोहपरिणाह संपन्न-** शरीर की लंबाई-चौड़ाई-मोटाई सुडौल हो और प्रभावपूर्ण हो,

(ब) विकलांग, अधूरा या बेडौल अंग न हो,

(स) **स्थिर संहनन-** शरीर का संगठन स्थिर हो, ढीला-ढाला न हो एवं

(द) **प्रतिपूर्णेन्द्रिय-** सभी इन्द्रियाँ पूर्ण हो, सदोष न हो।

(4) वचन संपदा – मधुर, प्रभावी एवं आदेय वचनों की संपन्नता। इसके भी चार भेद हैं-

(अ) **आदेय वचन-** जनता द्वारा ग्रहण करने योग्य,

(ब) **मधुर वचन-** मीठे वचन हों, कर्णकटु नहीं,

(स) **अनिश्चित वचन-** कषाय के वशीभूत होकर वचन नहीं निकलें, शांत भाव से बोलें व

(द) **असंदिग्ध वचन-** आशय स्पष्ट हो, श्रोताओं में किसी प्रकार का संदेह उत्पन्न न हो।

(5) वाचना संपदा – शिष्यों को शास्त्र पढ़ाने की योग्यता। इसके भी चार भेद हैं-

(अ) **विचयोद्देश-** किस शिष्य को कौनसा शास्त्र किस समय पढ़ाना चाहिए-इसका ठीक निर्देश कर सके,

(ब) **विचय वाचना-** शिष्य की योग्यता के अनुसार उसे वाचना देना,

(स) शिष्य की ग्रहण योग्य बुद्धि देखकर उसे पढ़ाना तथा

(द) **अर्थ निर्यापकुत्व-** अर्थ की संगति करते हुए पढ़ाना। यह संगति प्रमाण, नय, कारक, समास, विभक्ति आदि के साथ हो। पूर्वापर संबंध के साथ अर्थ विन्यास किया जाए।

(6) मति संपदा – मतिज्ञान की उत्कृष्टता। इसके भी चार भेद हैं-

(अ) अवग्रह, (ब) ईहा, (स) अवाय व (द) धारणा।

(7) प्रयोगमति संपदा – अवसर का ज्ञाता हो कि शास्त्रार्थ या विवाद किस समय किया जाए। इसके भी चार भेद हैं–

(अ) अपनी शक्ति को पहले तौल ले,

(ब) सभा को समझकर शास्त्रार्थ में प्रवृत्त हो,

(स) क्षेत्र को समझकर उपसर्ग आदि का अनुमान लगा ले व

(द) शास्त्रार्थ के विषय को भली प्रकार समझ ले।

(8) संग्रहपरिज्ञा संपदा – वर्षावास आदि के लिए मकान, पाटला, वस्त्रादि का ध्यान रखकर आचार के अनुसार संग्रह करना। इसके भी चार भेद हैं–

(अ) मुनियों के लिए योग्य स्थान देखना,

(ब) पीठ, फलक, शय्या, संथारे वगैरह का ध्यान रखना,

(स) समय के अनुसार सभी आचारों का पालन करना तथा कराना एवं

(द) अपने से बड़ों का विनय करना।

प्रवचन सारोद्धार के टीकाकरण के अनुसार आचार्य के छत्तीस गुण इस प्रकार भी गिनाए गए हैं–

(1) **देशयुत–** साढ़े पच्चीस आर्य देशों में जन्म लेने वाला व आर्य भाषा जानने वाला,

(2) **कुलयुत–** पितृ–पक्ष से उत्तम कुल में उत्पन्न,

(3) **जातियुत–** मातृपक्ष से उच्च जाति में उत्पन्न,

(4) **रूपयुत–** स्वरूपवान, गुणवान तथा आदेय–वचन–युक्त,

(5) **संहनन–युत–** विशिष्ट शारीरिक–सामर्थ्य–युक्त,

(6) **धृतियुत–** विशिष्ट मानसिक स्थिरता एवं धैर्य का धारक,

(7) **अनाशंसी–** श्रोताओं को खरी बात सुनाने वाला निस्पृही,

(8) **अविकत्थन–** आत्मश्लाघा नहीं करने वाला मितभाषी,

(9) **अमायी–** अशठ और सरल परिणामी,

(10) **स्थिर परिपाटी–** निरंतर अभ्यास से अनुयोग–क्रम को स्थिर कर लेने वाला तथा व्याख्यान में स्खलित नहीं होने वाला,

(11) **गृहीत वाक्य–** उपादेय वचन के साथ सारगर्भित बोलने वाला,

(12) **जितपर्षत्–** परिषद को वश में करने में कुशल,

(13) **जितनिद्र–** निद्रा को जीतने वाला, थोड़ा सोने व अधिक चिंतन–मनन करने वाला,

(14) **मध्यस्थ–** सभी शिष्यों के प्रति समभाव तथा सभी का समान पूज्य,

(15–17) **देश, काल और भाव का ज्ञाता,**

(18) **आसन्नलब्ध प्रतिभ–** समयानुकूल तत्काल बुद्धि की उत्पत्ति, जिससे अन्यतीर्थी प्रभावित हों तथा शासन की महती प्रभावना हो,

(19) **नानाविध देश–भाषज्ञ–** अनेक देशों की भाषाओं का ज्ञाता,

(20–24) **ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप और वीर्य–** इन पाँच आचारों का उत्साह व उपयोगपूर्वक पालन करने वाला,

(25) **सूत्रार्थ तदुभय विधिज्ञ–** सूत्रागम, अर्थागम और तदुभयागम का ज्ञाता–व्याख्याता,

(26–29) **आहारण हेतु उपनय निपुण–** आहारण अर्थात् दृष्टांत, हेतु, उपनय और नय में कुशल,

(30) **ग्राहणा कुशल–** दूसरों को समझाने की कला में कुशल,

(31, 32) **स्व–पर समय वेदी–** अपने एवं अन्यतीर्थियों के सिद्धांतों का जानकार, खंडन–मंडन में सिद्धहस्त,

(33) **गंभीर–** तुच्छ व्यवहार के अभाव में गौरव का रक्षक,

(34) **दीप्तमान–** तेजस्वी प्रभाव सहित,

(35) **शिव–** कोप न करने वाला लोक कल्याणी एवं

(36) **सोम–** सौम्य एवं शांत दृष्टि वाला।

आचार्य पाँच प्रकार के कहे गए हैं–

(1) प्रव्राजकाचार्य– सामायिक आदि व्रत का आरोपण कराने वाले,

(2) दिगाचार्य– सचित्त, अचित्त, मिश्र वस्तु की अनुमति देने वाले,

(3) उद्देशाचार्य– सर्वप्रथम श्रुत का कथन करने वाले या मूलपाठ सिखाने वाले,

(4) समुद्देशानुज्ञाचार्य– श्रुत की वाचना देने वाले तथा गुरु के न होने पर श्रुत को स्थिर–परिचित करने की अनुमति देने वाले एवं

(5) आम्नायार्थ वाचकाचार्य– उत्सर्ग–अपवाद रूप आम्नाय अर्थ को कहने वाले।

आचार्य और उपाध्याय में शेष साधुओं की अपेक्षा पाँच अतिशय अधिक माने गए है–

(1) उत्सर्ग रूप से सभी साधु जब बाहर से आते हैं, तो उपाश्रय में प्रवेश करने से पहले बाहर ही पैरों को पूँजते और झटकाते हैं, किंतु आचार्य–उपाध्याय बाहर से लौटकर उपाश्रय के बाहर ही खड़े रहते हैं और दूसरे साधु उनके पैरों का प्रमार्जन व प्रस्फोटन करते हैं। बाहर न ठहरकर भीतर भी आ जाते हैं, तो उनके पैरों को पूँजने व झटकाने की सेवा दूसरे साधु करते हैं। यह उनका अतिशय माना गया है। इससे उनके साध्वाचार का अतिक्रमण नहीं होता।

(2) आचार्य एवं उपाध्याय का उपाश्रय में लघुनीत, बड़ीनीत का अवसर देखना या पैर आदि में लगी हुई अशुचि को हटाने में साधु के आचार का अतिक्रमण नहीं होता।

(3) आचार्य व उपाध्याय इच्छा हो तो दूसरे साधुओं की वैयावृत्य करते हैं और इच्छा नहीं हो तो नहीं भी करते हैं।

(4) आचार्य व उपाध्याय उपाश्रय में एक या दो रात तक अकेले रहते हुए भी साध्वाचार का अतिक्रमण नहीं करते।

(5) आचार्य व उपाध्याय उपाश्रय से बाहर एक या दो रात तक अकेले रहते हुए भी साध्वाचार का अतिक्रमण नहीं करते।

किसी काम के लिए विधान करने को आज्ञा कहते हैं और किसी बात से रोकने को धारणा।

आचार्य और उपाध्याय सात बातों का ध्यान रखने से ज्ञान अथवा शिष्यों का संग्रह कर सकते हैं। इनसे संघ में व्यवस्था भी कायम रह सकती है, तो दूसरे साधुओं को अपने अनुकूल व नियमानुसार भी चला सकते हैं। वे सात बातें या संग्रह इस प्रकार हैं–

(1) आचार्य और उपाध्याय को आज्ञा और धारणा का सम्यक् प्रयोग करना चाहिए। किसी काम के लिए विधान करने को आज्ञा कहते हैं और किसी बात से रोकने को धारणा। इस तरह के नियोग (आज्ञा) और नियंत्रण (धारणा) के अनुचित होने पर साधु आपस में अथवा आचार्य के साथ कलह करने लगते हैं, जिससे व्यवस्था टूटनी शुरू हो जाती है। उसे भी आज्ञा कहते हैं। जब देशांतर में रहा हुआ गीतार्थ साधु अपने अतिचार को गीतार्थ आचार्य से निवेदन करने के लिए अगीतार्थ साधु के सामने जो कुछ गूढ़ार्थ पदों में कहता है। उसे भी धारणा कहते हैं, जब अपराध की बार–बार आलोचना के बाद जो प्रायश्चित्त विशेष का निश्चय किया जाता है। इन दोनों का प्रयोग यथारीति से किया जाना चाहिए, ताकि संघ में एकता और दृढ़ता बनी रहे।

(2) आचार्य और उपाध्याय को रत्नाधिक की वंदना आदि का सम्यक् प्रयोग कराना चाहिए। दीक्षा के बाद ज्ञान, दर्शन और चारित्र में बड़ा साधु छोटे साधु द्वारा वंदनीय समझा जाता है। यदि कोई छोटा साधु रत्नाधिक को वंदना न करे तो आचार्य और उपाध्याय का कर्त्तव्य है कि वे उसे वंदना के लिए प्रवृत्त करें। वंदना व्यवहार के लोप होने से व्यवस्था के टूटने की आशंका रहती है।

(3) आचार्य और उपाध्याय हमेशा ध्यान रखें कि शिष्यों में जिस समय सूत्र के पढ़ने की योग्यता हो अथवा दीक्षा के बाद जब जो सूत्र पढ़ाया जाना चाहिए, यथासमय यथायोग्य सूत्र शिष्यों को पढ़ाया जाए। यह तीसरा संग्रह स्थान है।

(4) आचार्य और उपाध्याय को बीमार, तपस्वी तथा विद्याध्ययन करने वाले साधुओं की वैयावृत्य का समुचित प्रबन्ध करना चाहिए।

(5) आचार्य और उपाध्याय को दूसरे साधुओं से पूछकर कोई भी काम करना चाहिए, मनमाने ढंग से नहीं। शिष्यों से अपने दैनिक कृत्यों के लिए भी पूछते रहना चाहिए।

(6) आचार्य तथा उपाध्याय को अप्राप्त आवश्यक उपकरणों की प्राप्ति के लिए सम्यक् प्रकार से व्यवस्था करनी चाहिए। साधुओं के लिए आवश्यक वस्तुओं की निर्दोष प्राप्ति का यत्न इस कारण आवश्यक है कि उनमें अकारण अंसतोष न फैले।

(7) आचार्य व उपाध्याय को पूर्व-प्राप्त उपकरणों की रक्षा का भी ध्यान रखना चाहिए। उन्हें ऐसे स्थान पर नहीं रखने देना चाहिए कि जिससे वे खराब हों या चोर आदि ले जाएँ। यह सातवाँ और अंतिम संग्रह स्थान है।

स्वयं आचार्य या उपाध्याय भी पाँच प्रकार के कारण उपस्थित होने पर संघ का परित्याग कर सकते हैं। ये कारण हैं-

(1) संघ या गच्छ में साधुओं के दुर्विनीत हो जाने पर जब 'इस प्रकार प्रवृत्ति करो और इस प्रकार न करो' इत्यादि प्रवृत्ति-निवृत्ति रूप आज्ञा, धारणा आदि न प्रवर्ता सकें।

(2) रत्नाधिक साधुओं की यथायोग्य अथवा साधुओं में छोटों से बड़े साधुओं की जब विनय-भक्ति नहीं करा सकें।

(3) जो सूत्रों के अध्ययन, उद्देशक आदि धारण किए हुए हैं, वे आचार्य और उपाध्याय उनकी यथावसर वाचना न दे, जिससे दोनों ओर की अयोग्यता प्रकट होवे। वाचना के प्रति इस असावधानी में दोनों ही तथ्य जिम्मेदार हो सकते हैं कि या तो वाचना लेने वाले साधु अविनीत हों या आचार्य और उपाध्याय ही सुखासक्त और मंदबुद्धि हों अथवा दोनों ही बातें हों।

(4) एक संघ में रहे हुए आचार्य या उपाध्याय अपने या दूसरे संघ की साध्वी में मोहवश आसक्त हो जाएँ।

(5) आचार्य या उपाध्याय के मित्र या ज्ञाति के लोग किसी कारण से उन्हें संघ से निकाल दें। उन लोगों की बात स्वीकार कर उनकी वस्त्रादि से सहायता करने के लिए आचार्य और उपाध्याय संघ से निकल जाते हैं।

इस संपूर्ण विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि आचार्य का पद कितने महत्व एवं मूल्य का होता है? तीर्थंकर तीर्थों की रचना करते हैं तथा उनकी सुव्यवस्था बनाते हैं, तो जिस समय में तीर्थंकर नहीं विराजते हैं, उस समय आचार्य का भी मोटे तौर पर वैसा ही दायित्व होता है। आचार्य संघ की रचना नहीं करते, किंतु वे अपनी दूरदर्शिता एवं कुशलता से चतुर्विध संघ का संचालन इस रूप में कर सकते हैं कि संघ की एकता और सुदृढ़ता व्यवस्थित बने तथा सिद्धांतनिष्ठ संस्कृति की सुरक्षा हो। आचार्य का संघ-नायकत्व इस दृष्टि से अति पूज्य होता है।

मैं अनुशासक आचार्य हूँ यानी कि मैं हो सकता हूँ। मुझ में क्षमता है, किंतु अपने अथक पुरुषार्थ से उसे प्रकटानी है। जब मैं अपने पुरुषार्थ को सफल बनाकर शुद्ध, बुद्ध, निरंजन सिद्ध हो सकता हूँ तो भला साधु, उपाध्याय और आचार्य क्यों नहीं हो सकता हूँ? तब वीतरागी अरिहंत भी तो हो सकता हूँ। मेरी आत्मा में और सभी भव्य आत्माओं में मूल रूप में ऐसा उच्चतम विकास साध लेने की शक्ति रही हुई है। वह वर्तमान में आवृत्त है, किंतु उसे अनावृत्त करने का सामर्थ्य भी इसी आत्मा में रहा हुआ है। यथायोग्य सामर्थ्य नियोजित होगा तो उसका यथायोग्य परिणाम भी प्रकट हो सकेगा।

साभार- नानेशवाणी-4 (आत्म-साक्षात्कार) श्रमणोपासक

आगमधर गुरु समकिती

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

शांति जिन एक मुझ विनति....।

बिना कारण के कार्य संपन्न नहीं होता है। हम कोई भी कार्य करें, उसके पीछे कोई कारण निश्चित रूप से होता है और कारण होता है तभी कार्य संपादित होता है। वैसे एक कारण और कार्य व्यावहारिक होता है और दूसरा नैश्चयिक होता है। यद्यपि व्यवहार में हमें लगता है कि कारण और कार्य अलग-अलग समय में संपन्न होते हैं, परंतु वैसा होता नहीं है। इस प्रकार यदि धर्मस्थान में आना कार्य है तो चलना कारण हो गया। ये व्यावहारिक रूप है, किंतु नैश्चयिक रूप से प्रत्येक क्षण में कारण-कार्य की व्याख्या घटित हो रही है। जिस समय में कारण होता है, उसी समय में कार्य संपन्न होता है।

भले ही हम शांति प्राप्त करना चाहते हों तो वहाँ भी कारण की अपेक्षा रहती है। उसमें पहला कारण बताया है- जीव का। जो जिनेश्वर हैं उन पर, उनकी वाणी पर एवं जो भी भाव उन्होंने व्यक्त किए हैं या जो प्रवचन उन्होंने फरमाए हैं उन्हीं के अनुसार श्रद्धान होना। दूसरा कारण गुरु के रूप में लिया गया है-

आगमधर गुरु समकिती...।

गुरु आगम को धारण करने वाला होना चाहिए। विचार करें कि आगम को धारण करने की आवश्यकता क्यों पड़ती है? आगम की व्याख्या मैं भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से कर चुका हूँ। ज्ञान को भी आगम कहा गया है, क्योंकि ज्ञान से ही ज्ञेय का बोध होता है। मति-श्रुत ज्ञान हमारे अंदर होते हैं। उन्हीं के आधार पर हम ज्ञेयकर ज्ञान कर पाते हैं। ज्ञेय में अस्तित्व और नास्तित्व के रूप में दोनों गुण होते हैं। बातें कुछ गूढ़ हैं, पर कुछ लोगों को रुचिकर भी लग सकती है।

समझ लीजिए कि यह ओघा है। यह कथन अस्तित्व गुण के आधार से है, किंतु इसे यह भी कह सकते हैं कि यह पूंजणी नहीं है, पाटा नहीं है। इसमें किसी पदार्थ का निषेध निरूपित करना होता है। इसे उसके भीतर रहे नास्तित्व गुण के आधार पर कह सकते हैं- यह अमुक है, रजोहरण ही है, यह पूंजणी नहीं है। ऐसा जो नैश्चयिक व्यवहार होता है, वह प्रत्येक पदार्थ में अस्तित्व-नास्तित्व गुण के आधार पर निरूपित किया जाता है। संसार की प्रत्येक वस्तु में ये दोनों गुण विद्यमान होते हैं, अन्यथा इसे यही कहा जाएगा- यह ओघा ही है। नास्तित्व गुण नहीं है तो किसी के माध्यम से निषेध नहीं किया जा सकता है। इसे एक उदाहरण से समझिए। एक भाई दर्शनार्थ आया। समझ लीजिए कि 'गौतम मुनि जी' को वंदन किया और कहा- ''माता जी वाला महाराज **मत्थएण वंदामि**''। माता जी वाले हैं 'अक्षय मुनि'। वह अक्षय मुनि मानकर वंदन कर रहा है। पास वाले ने कहा- ''ये बीकानेर वाले हैं।'' इस प्रकार इनमें अस्तित्व गुण है तथा इनमें नास्तित्व गुण भी है। यह अस्तित्व-नास्तित्व भाव समझ में आ जाना चाहिए। यह जैन सिद्धांत की मूल आधार भूमि है।

लोग कहते हैं कि स्याद्वाद हमारी समझ में नहीं आता। यही तो स्याद्वाद है। स्याद् अस्ति, स्याद् नास्ति.....। यह दर्शाता है कि प्रत्येक पदार्थ में एक नहीं अनेक धर्म हैं, किंतु जिस धर्म की व्याख्या की जा रही है, उस समय वही उपादेय है या उसी को व्यक्त करना है। इसलिए उस समय उस धर्म की प्ररूपणा करते हैं। यह अवस्था होती है ज्ञान के आधार पर। किंतु ज्ञान की आवश्यकता कहाँ होती है? ज्ञेय को जानने के लिए।

ज्ञेय का तात्पर्य है जिसे जाना जाता है। जितने भी पदार्थ होते हैं, वे जानने योग्य हैं, जाने जाते हैं। यथा- पाटा, घड़ा, ओघा, कपड़ा आदि। वैसे ही आत्मा है, पुद्गल है, वे भी जाने जाते हैं। वे सारे के सारे ज्ञेय हैं। उन सबका बोध कराने वाला ज्ञान है। ज्ञान के माध्यम से आत्मा उन्हें जानती है। ज्ञान हो गया माध्यम, किंतु ज्ञान मात्र पदार्थ का ज्ञान ही नहीं कराता, चित्त को एकाग्र करने में भी ज्ञान का बहुत बड़ा योग रहता है। यदि ज्ञान नहीं है तो चित्त को एकाग्र भी नहीं कर पाएँगे। इस बात की बहुतों को शिकायत रहती है। कहते हैं- मन एकाग्र नहीं रहता। तो उसके लिए ही यह इलाज बताया जा रहा है कि इलाज कीजिए। ज्ञान की प्राप्ति करेंगे तो वह मन को एकाग्र बनाने वाला भी बनेगा।

मन एकाग्र नहीं होता है, यह तर्क भी अपने आप में सही नहीं है। मन एकाग्र होता है। आप पहुँचे सिनेमाघर में, पर्दे पर कोई रोचक दृश्य आ रहा होता है तो पास वाले या दूसरे क्या कर रहे हैं, इसका ज्ञान नहीं होता है। कभी रोकड़ में गड़बड़ हो जाए, लगे कि कभी भी चैकिंग आ सकती है, ठीक करने लगे हों तो एकाग्रता आ जाती है या नहीं? उस कार्य को महत्ता दी तो एकाग्रता आ गई। वैसे ही यदि महत्ता तत्त्वबोध को दें तो हो नहीं सकता कि मन न लगे। न लगे तो धीरे-धीरे लगाना पड़ता है। जैसे बालक प्रारंभ में स्कूल जाना नहीं चाहता, पर धीरे-धीरे आदत डालते हैं। पहले टेढ़ी लकीरों का, फिर अक्षर लिखने का अभ्यास कराते हैं। फिर जब किताबें पढ़ने लग जाता है, पढ़ने में रुचि जम जाती है तब कहें कि आज स्कूल नहीं जाना, तो कहेगा- ''मैं अध्ययन छोड़ नहीं सकता'' और जो ट्युशन करते हैं या कोचिंग क्लासों में अध्ययन करते हैं उनको चाहे कितना भी आवश्यक कार्य हो, लेकिन वे अवकाश लेने में संकोच करेंगे। आज का पाठ निकल गया तो कल समझूँगा कैसे? जैसे अध्ययन के प्रति लगाव बना वैसे ही तत्त्वबोध के प्रति रुचि या एकाग्रता नहीं भी बनी है तो भी तत्त्वज्ञान प्राप्त करते-करते अवगाहन प्रारंभ हो जाए तो फिर देखो रुचि अवश्य बन जाएगी। फिर उसमें इतनी तल्लीनता आ जाएगी कि पास में कोई ढोल-शहनाई भी बजाए तो भी ध्यान विचलित नहीं होगा। चित्त की ऐसी एकाग्रता ज्ञान में सहायक होती है। ज्ञान चित्त को दृढ़ करता है और पहले की अवस्था को साफ करता है। चित्त में पकड़ नहीं होने देता तो वह निर्मल बना रहता है, सेफ बना रहता है। जब-जब हम पकड़ने का प्रयत्न करते हैं, किसी को चित्त में स्थान देते हैं, तब-तब उससे कुछ न कुछ अर्जित करते हैं। ऐसे ही कर्मों का अर्जन भी करते हैं, परंतु चित्त पर नहीं जमाया तो कर्मों का आदान नहीं होता। कितनी सरल प्रक्रिया है, किंतु होता ऐसा है कि हमारा अभ्यास विपरीतता का बना हुआ है। इस कारण उस दिशा में हम बढ़ नहीं पाते।

एक सत्य घटना है। किसी बड़े अपराध में पकड़े गए अपराधी को काला-पानी की सजा दी गई। क्या होती है काला-पानी की सजा? शायद ही किसी को अनुभव हो। किंतु कहते हैं- काल कोठरी में रखा जाता है। अंधकार-परिपूर्ण अवस्था होती है। प्रकाश रहता हो या थोड़ा प्रकाश रहता हो, पता नहीं। उसे 14 वर्ष वहाँ रखा गया, फिर जब बाहर निकला, खुले मैदान में आया तो उसकी आँखें चौंधियाने लगीं। कहने लगा- यहाँ रहना पसंद नहीं, वही स्थान अच्छा था। जैसे वहाँ रहते-रहते अभ्यास हो गया था वैसे ही संस्कार बन गए थे, पर वह समझ नहीं पा रहा था कि वह सजा थी। वैसी ही संसार की स्थिति है। विषय-वासना को काल कोठरी का रूप कहें या किंपाक फल जैसा विषमय बताएँ, पर सत्य यह है कि उसमें से निकल नहीं पाते। थोड़ा निकले तो लगता है- कहाँ आ गए! बार-बार उसी विषय-वासना रूपी काल कोठरी में उलझने का प्रसंग आ जाता है और जो विषय-वासना में उलझता है, उसे काल कोठरी में आना पड़ता है। हमारी जन्म-मरण की प्रक्रिया क्या है? माता का गर्भ कोठरी जैसा है। किसी को ज्ञान हो तो लगेगा अब नहीं आना। हे भगवान! बाहर निकल गया तो रोज भक्ति करूँगा, मनुष्य जन्म सफल बनाऊँगा, किंतु जब निकल गए, धीरे-धीरे बचपन का ज्ञान छूटा, परिवार का मोह-ममत्व जुड़ा कि सब भूल जाते हैं। वही

बातें रह जाती हैं, क्योंकि बार-बार का अभ्यास बना हुआ होता है। अनादि का अभ्यास है, इतनी जल्दी छेदन करना कठिन होता है, परंतु छेदन किया जा सकता है। करने वाली आत्मा करती भी है, पर उसके लिए पुरुषार्थ जगाना पड़ता है। अनादिक संबंध को एक धक्के में हटा सकते हैं, पर स्थिति यह है कि धक्का लगा नहीं पाते। दूसरों को कितना ही सुना दें, पर अपनी आत्मा को नहीं सुना पाते, क्योंकि वहाँ पुरुषार्थ जगाना पड़ता है। वह पुरुषार्थ यदि चित्त की एकाग्रता में बने तो जल्दी भी हो सकता है।

हमसे ध्यान के लिए कहा जाता है, किंतु ध्यान के पूर्व ज्ञान होना चाहिए। यदि ज्ञान नहीं है तो चित्त भ्रमित हो जाएगा, एकाग्रता नहीं बनेगी। ज्ञान हो गया तो फिर ध्यान उसमें आ ही जाएगा। प्रयास करने की आवश्यकता पड़ेगी। जैसे ही तत्त्वज्ञान के पानी में उतरे कि पैर चलेंगे नहीं, तैरने लग जाएँगे। फिर ये नहीं पूछना पड़ेगा कि पैर कैसे चलाऊँ, क्योंकि ज्ञान प्राप्त हो चुका होता है। नदी में उतरे कि हाथ-पैर चालू हो जाएँगे। वैसे ही हम ध्यान की अवस्था में निमज्जित हो जाएँगे। इस प्रकार की अवस्था आगमधर की होनी चाहिए। इस प्रकार की अवस्था होगी तो ही वे दूसरों को आगमिक ज्ञान दे पाएँगे और शांति प्रदान कर पाएँगे, नहीं तो आप जानते हैं-

आप डूबे पांडियो, ले डूबे जजमान

ऐसा होगा तो न गुरु तिर पाएगा, न चेला तिर पाएगा। यदि कोई जिज्ञासु है, मुमुक्षु है तो गुरु का कर्त्तव्य है कि उसे सहयोग दें। मुमुक्षा बढ़ाएँ, जिज्ञासा प्रबल करें। वह प्रबल हो जाएगी तो वह भी तैरने में समर्थ हो सकेगा।

भगवान महावीर के पास जितने दीक्षार्थी पहुँचे उनसे उन्होंने क्या कहा? कहा-

अहासुहं देवाणुप्पिया, मा पडिबंधं करेह

प्रतिबंध, रुकावट नहीं। अब देर नहीं करनी। यदि पुरुषार्थ जगा है तो सार्थक करो। जैसा सुख हो, वैसा करो। निश्चित है कि सुख किसमें है। जो इन भावनाओं से बढ़ता है उसे पहले से ही सुख का आभास हो जाता है। बिना सुख के आभास के ली जाने वाली दीक्षा में संभव है कि कोई फिसल जाए, रुक जाए, किंतु जो समझता है कि इसमें इतना सुख है वह कभी रुकेगा नहीं। कोई करोड़पति हो, लखपति हो, धन-जन से संपन्न हो, उसकी सुख की कल्पना कपोल-कल्पित हो सकती है। बड़े-बड़े करोड़पतियों की दयनीय दशा देखी गई है। मेरे कहने की आवश्यकता नहीं है, आप स्वयं जानते हैं और अनुभव करते हैं। दुनिया के मंच पर ऐसे दृश्य भी देखने में आते हैं कि परिवार में 50 सदस्य हों, पर संभव है कि किसी को फुर्सत नहीं मिले कि उसके पास बैठकर सांत्वना दें या सेवा-सुश्रूषा में योगदान दे। ऐसा नहीं होता ये तो नहीं कह सकता कि आज के युग में व्यक्ति इतना व्यस्त है कि उसे मरने की फुर्सत भी नहीं है। उठते ही भागने की अवस्था रहती है। ऑफिस को भागना है, दुकान को भागना है, पता नहीं कहाँ-कहाँ भागना होता है। वस्तुत: शांति की चाहना है तो समर्थ गुरु की खोज करें। कवि ने कहा भी है-

आगमधर गुरु समकिती....।

ऐसे गुरु की खोज करें जो आगमधर हो।

कहीं-कहीं ऐसा भी कहा गया है कि शिष्य गुरु की खोज कर नहीं सकता, किंतु गुरु को शिष्य की खोज करनी पड़ती है। यह बात भी महत्त्वपूर्ण है। शिष्य अंधकार का रूप है तो गुरु प्रकाश का पर्याय हैं। वे आगमधर का रूप हैं। अंधकार प्रकाश को ढूँढ़ नहीं सकता, किंतु प्रकाश अंधकार को ढूँढ़कर मिटा सकता है। इसलिए कहा जाता है कि गुरु को शिष्य की खोज करनी पड़ेगी। शिष्य में इतना ज्ञान नहीं होता कि वह गुरु की खोज कर सके, किंतु गुरु में ज्ञान होता है। वह शिष्य के भीतर की अवस्था का ज्ञान कर सकता है, इसलिए शास्त्रकार कहते हैं-

सुट्ठुदिण्णं, दुट्ठुपडिच्छियं....।

जो वाचना का अधिकारी है, उसी को वाचना देनी चाहिए। जो अधिकारी नहीं हो उसके लिए कहा गया है कि उसे नहीं देना। यदि परिस्थितिवश देनी पड़े तो शाब्दिक या शब्द का अर्थ व्याख्यायित किया जा सकता

है, लेकिन उसके भीतर का अंतर रहस्य प्रकट नहीं किया जा सकता, क्योंकि उसकी मानसिक क्षमता उतना ग्रहण करने की नहीं होगी। कोई टाइफाइड से उठा हो और उठते ही उसे बादाम का हलवा दे दें तो क्या होगा? वह बेमौत मारा जाएगा, क्योंकि वह हलवा पचा नहीं पाएगा। वैसे ही जिसका मनोबल क्षीण हो वह वाचना का अधिकारी नहीं हो सकता। उत्तराध्ययन सूत्र के 11वें अध्ययन में बताया गया है कि कौन अधिकारी है, किसे दी जाए। वहाँ योग्य पात्र की सम्यक् विवेचना की गई है। कहा गया है कि जिसकी मानसिक अवस्था चंचल है, जो बार-बार क्रोध करता है, जो विषयलोलुप है, अहंकार में चलने वाला है, ऐसे व्यक्ति का चित्त चंचल अथवा हिला हुआ होता है, स्थिर नहीं होता है, उसके लिए निषेध है। ऐसा व्यक्ति जिसका चित्त हिला हुआ हो उसके चित्त का अंकन करना चाहें तो सही तरीके से हो नहीं पाएगा। एक्स-रे मशीन के सामने मरीज को रखा जाए और वह हलन-चलन करे तो चित्र सही आ नहीं पाएगा। वैसे ही यदि चंचल चित्त में वाचना दी गई तो उसका अंकन नहीं होगा। आई और गई। हमारा कार्य सुनने के बाद समाप्त हो जाता है, यह गलत है। होना यह चाहिए कि सुनने के बाद आगे बढ़ने की प्रवृत्ति भी बने।

शास्त्र में स्वाध्याय के 5 भेद कहे गए हैं- वाचना, पृच्छना, परिवर्तना, अनुप्रेक्षा और धर्मकथा। **वाचना** ली और यह चित्त में निरन्तर बनी रहे तभी जाकर पूछने के भाव पैदा होंगे, नहीं तो **पृच्छा** की स्थिति बन नहीं पाएगी। पृच्छा नहीं तो उस विषय की पूरी जानकारी हो नहीं पाएगी। **पृच्छना** जिज्ञासा का परिणाम होती है और ज्ञान की तह तक ले जाती है। उसके पश्चात् **परिवर्तना** है। घर-बार की ओर परिवर्तना से ज्ञान दृढ़ हो जाता है। **अनुप्रेक्षा** से ज्ञान की तह तक पहुँचा जा सकता है, तभी धर्मकथा कहने का अधिकारी बन सकता है।

आगमधर के साथ गुरु या आचार्य का दूसरा विशेषण दिया गया है- समकिती, क्योंकि कुछ आगम धारण करने वाले अभवी-अज्ञानी भी होते हैं। सारे आगमधर समकिती नहीं होते। ऐसी स्थिति में असुविधाएँ आ सकती हैं। समकिती अर्थात् जो जिनेश्वर देव द्वारा कहे विषय को तहमेव श्रद्धान करे।

तमेव सच्चं नीसंकं जं जिणेहि पवेइयं

वही सत्य है, जो जिनेश्वर भगवंतों द्वारा प्ररूपित किया गया है, ऐसी दृढ़ आस्था का रूप बने तो जीवन में परिवर्तन होगा, शांत भाव बना रहेगा और अशांति छू नहीं पाएगी। यथार्थ में ऐसे पुरुष का आश्रय लेकर चित्त को वैसा बनाने का प्रयत्न करें।

बंधुओ! हमारी आत्मा भी महावीर के साथ, तीर्थंकर देवों के साथ रही है, पर हम अवसर का सदुपयोग नहीं कर पाए। हमारी स्थिति वैसी ही बनी रही और इसी कारण हम संसार में परिभ्रमण करते रहे। अब मन में आ रहा हो कि संसार सागर से आत्मा को उबारें तो आगे बढ़ना होगा और साधु जीवन स्वीकार करने के बाद संसार छेदन करने का पुरुषार्थ करना होगा। संसार-छेदन किससे होता है? लोहे को काटने के लिए छैनी होती है। लकड़ी को काटने के लिए आरी होती है। ये सब साधन हैं, जो कारण बनते हैं किसी कार्य के संपन्न होने का। वैसे ही संसार को काटने के लिए संवर की आराधना करें, जो साधन बनेगा, कारण बनेगा और हम जन्म-मरण को छेद पाएँगे। कितनी देर लगी थी? गजसुकुमाल ने सारे फंदे एक दिन में तोड़-ताड़ दिए थे और मरुदेवी माता तो ऋषभदेव तक पहुँच भी नहीं पाईं, पहले ही कहाँ चली गईं? हमारी आत्मा में वह शक्ति है, किंतु जगाने का पुरुषार्थ करना होगा और कर लिया तो फिर भाव बनेगा-

है संयम सुख की खान, प्यारे जीवन में।
ले इसको तू पहचान, प्यारे जीवन में।

पहचान करके बढ़ें तो जीवन में आनंद उपलब्ध कर पाएँगे, जीवन को धन्य बना पाएँगे। शांति का सोपान पाना चाहते हैं तो आगमधर समकिती गुरु का आश्रय लेकर जीवन को आगे बढ़ाने का प्रयत्न करें।

साभार- श्री राम उवाच-10 (करें तीर्थ की परिक्रमा)

ऐसी वाणी बोलिए

मधुर वचन

15-16 दिसंबर 2023 अंक से आगे....

'ऐसी वाणी बोलिए' धारावाहिक वाणी पर संयम, नियंत्रण एवं संतुलन का संदेश देता है। इस धारावाहिक के कई शीर्षक भाषा सुधार हेतु प्रस्तुत किए जा चुके हैं। 'मित वचन' पूर्ण होने के पश्चात् 'मधुर वचन' प्रस्तुत किए जा रहे हैं। आप सभी इन वचनों को जीवन में उतारेंगे तो निश्चय की व्यवहार संतुलन की नई दिशा प्राप्त करेंगे। आगे प्रस्तुत है....

7 बहस करना

★ ''अट्ठे परिहायती बहू, अहिगरणं न करेज्ज पंडिए''
(श्री सूत्रकृतांग सूत्र (1/2/2/19))
'बुद्धिमान को कभी किसी से कलह, झगड़ा नहीं करना चाहिए। कलह से बहुत बड़ी हानि होती है।'

★ वक्त पर व्यक्त किए गए वक्तव्य से ही हर व्यक्ति के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति आसानी से हो जाती है। (बहस करने वाले को देखकर लोगों के दिमाग में हमेशा के लिए गलत छवि बन जाती है।)

★ सभ्य और विनम्र लोग किसी बात पर बहस नहीं करते।

★ ये सिर्फ एक ब्लेम गेम (Blame Game) की तरह है, जिसमें I am right, you are wrong (मैं सही, तुम गलत) का झगड़ा होता है।

★ इसके द्वारा कोई भी अपने आपको सही साबित नहीं कर पाता। क्योंकि जैसे ही कोई एक बात कहता है, दूसरा उसे काटकर अपनी कहता है। फिर पहला उसे काटकर अपनी कहता है, यह चलता रहता है। आइए देखते हैं कि लोग किन-किन कारणों से कैसे-कैसे बहस करते हैं और इससे बचने के लिए क्या करना चाहिए।

बच्चा - पापा-पापा, दो व्यक्तियों के बीच युद्ध कैसे प्रारंभ होता है? मुझे समझाइए।

पापा - मान लो, अमेरिका, भारत के साथ युद्ध प्रारंभ करे...

पत्नी (रसोई के अंदर से बोली) - आप कैसी बेतुकी बातें कर रहे हो? भारत के साथ युद्ध करना है तो पाकिस्तान करेगा, अमेरिका क्यों करेगा?

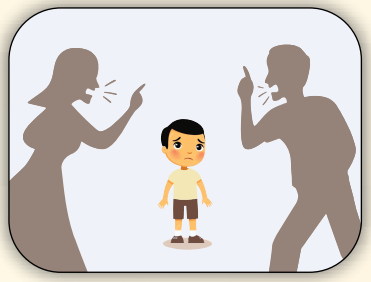

पति - पर मैं तो मानने की बात कह रहा हूँ।

पत्नी - लेकिन ऐसा गलत मानने की आवश्यकता क्या है?

पति - पर बेटे ने मुझसे पूछा है, तुम्हें बीच में कूदने की क्या आवश्यकता है?

पत्नी - आप गलत जवाब दोगे तो मुझे बोलना ही पड़ेगा।

पति - तुम्हारा ये व्यवहार मैं किसी भी सूरत में बर्दाश्त करने को तैयार नहीं हूँ।

पत्नी - आपका झूठ मैं भी बर्दाश्त करने के लिए तैयार नहीं हूँ।
पत्नी ने बेलन उठाया, पति ने रिमोट उठाया, बच्चा दोनों के बीच में आया और बोला - पापा, मैं समझ गया युद्ध कैसे प्रारंभ होता है।

- बहस का कोई फिक्स पैटर्न नहीं है, यह किसी भी बात पर शुरू हो जाती है।
- किसी को भी हमारी कोई बात या कोई चीज सही नहीं लगी और उसने हमें टोक दिया, उसकी बात पर हमने गलत प्रतिक्रिया दे दी, तो बहस चालू हो सकती है।
  अथवा हमने किसी को टोक दिया, उसने हमारी बात काट दी, तो बहस हो सकती है।
- दो लोगों में मतभेद होने के बाद जब तक दोनों एक-दूसरे की बात का जवाब देते रहेंगे, तब तक बहस चलती रहेगी।

(A) ज्ञान-ध्यान सीखते-सिखाते हुए किसी बात पर बहस करना -

श्रावक 1 (Class के बीच में) - आपने पिछली Class में कहा था कि भिंडी अनंतकायिक है, परंतु वह तो प्रत्येक वनस्पति है। आपको पढ़ाने से पहले चेक कर लेना था।
श्रावक 2 (Teacher) (असहज होकर) - नहीं-नहीं वह अनंतकायिक ही है, मैं कोई गलत थोड़ी पढ़ाऊँगा।
श्रावक 1 - मुझे पक्का मालूम है। आप मानते क्यों नहीं हैं?
श्रावक 2 - इसमें मानने का Point ही नहीं है। मैं कोई बेवकूफ थोड़ी हूँ, मैंने भी शास्त्रों का अध्ययन किया है।

श्रावक 1 - शास्त्रों का आपने अध्ययन किया होगा, पर आपकी ये बात गलत है। आपको अपनी गलती माननी चाहिए।
श्रावक 2 - आप यहाँ मेरी गलती निकालने बैठे थे क्या?
श्रावक 1 - आप ज्ञान सिखाते हैं, पर आप में कषाय कितना है।
श्रावक 2 (तेज गुस्से में) - आप अकषायी हो गए क्या? आप में मेरे से ज्यादा कषाय है।
श्रावक 1 - ऐसे लोगों को पढ़ाने का मौका ही नहीं देना चाहिए।
श्रावक 2 - तुम कौन होते हो मुझे मना करने वाले?
श्रावक 3 (श्रावक 1 से) - आप इतना समझते हैं, तो आप चुप हो जाइए।
श्रावक 2 - आपको बीच में बोलने की क्या जरूरत है?
2-4 श्रावक और बीच में बोले, सबमें बहस हो गई...। आपस में मनमुटाव हुआ, बोलचाल बंद हो गई। पढ़ाने वाले ने स्थानक आना बंद कर दिया। बीच में बोलने वालों ने ज्ञान-ध्यान सीखना बंद कर दिया। पूरे गाँव में माहौल खराब हो गया।

सही तरीका - सामने वाले को जैसे ही गर्मी (तेजी) आए, बात वहीं छोड़ देनी चाहिए। जैसे ही वह भड़के, वैसे ही कह देना चाहिए - कोई बात नहीं, हो सकता है मुझसे गलती हुई हो।

Note 1 - इसी प्रकार लोग संघ में पैसे के नाम से, भवन के नाम से, पद के नाम से बहस पर उतर जाते हैं और संघ समाज को एक कोर्ट बना देते हैं। हमें विचार करना चाहिए कि यह बंधन का स्थान नहीं है, निर्जरा का स्थान है।

2 - आचार्य श्री नानेश ने एक बार एक श्रावक को शिक्षा देते हुए फरमाया- ''जो टिन शेड ढीले होते हैं, आवाज करते हैं। उसकी छाया में कोई नहीं आता, क्योंकि वहाँ पहले से ही भड़भड़ हो रही है, तो अपनी सुरक्षा क्या होगी? इसलिए अपने भड़भड़ की आवाज बाजार में मत जाने दो, वरना कोई नया व्यक्ति धर्म संघ से जुड़ना ही नहीं चाहेगा।''

(B) *एक श्रावक ने दूसरे को कहा- तुम झूठ बोल रहे हो। कम से कम धर्मस्थान में तो झूठ मत बोलो। बस दूसरे को आग लग गई - मैं झूठ बोल रहा हूँ? तुम ही झूठ बोलते होंगे। मेरे ऐसे संस्कार नहीं हैं। बहस प्रारंभ।*

Note - कोई कुछ भी बोले, पर श्रावक को किसी को झूठ नहीं बोलना चाहिए। यह कलह उत्पादक वचन है।

(C) *प्रतिक्रमण के समय एक श्राविका ने कहा- ''पहले वंदना करते हैं, फिर आज्ञा लेते हैं।''*

पीछे से 2-4 श्राविकाएँ एक साथ बोलीं- ''कोई नहीं, पहले आज्ञा लेते हैं, फिर वंदना।'' बहनों को एक टॉपिक मिल गया। बहस चालू हो गई। पूरे भवन में हल्ला मच गया।

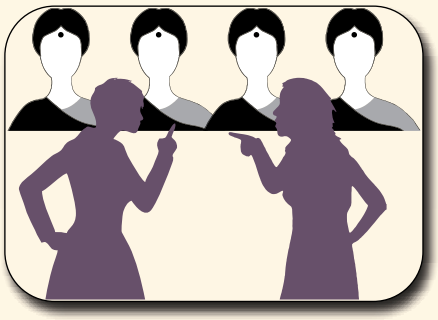

*एक समझदार श्राविका ने जोर से जय बुलाई- भगवान महावीर स्वामी की....। सब शांत हुए। फिर उन्होंने बड़ी शालीनता के साथ कहा- **''अभी प्रतिक्रमण का समय जा रहा है, इसलिए यदि आप सबको उचित लगे तो आज हम पहले वंदना कर लेते हैं, फिर किसी से पूछ लेंगे और यदि किसी का मन नहीं माने, तो वे मन-मन में अपने हिसाब से कर सकते हैं।''***

Note - चाहे श्राविकाएँ हो या श्रावक, धर्मध्यान में हल्ला मचाना शोभा नहीं देता।

(D) *सास दूध चढ़ाकर चली गई। बहू रोटी बनाने में Busy - ध्यान नहीं रहा, दूध उफन गया।*

सास आते ही (गुस्से में)- दूध सामने चढ़ा हुआ है, तुम्हें इतना तो ध्यान रखना चाहिए।

बहू गुस्से में - मुझे क्या पता। मुझे बताकर जाना चाहिए।

सास - इसमें बताने की क्या बात है, सामने दिखती चीज है।

बहू - मेरा ध्यान मेरे काम में रहता है, मैं इधर-उधर नहीं देखती।

सास - तुम्हें कुछ कहना मतलब 10 सुनना है, थोड़ा भी विनय नहीं है।

बहू - आपको हमेशा बुराई ही दिखती है, कभी अच्छा तो बोलते ही नहीं। लगातार चालू...। कई दिनों तक बातचीत बंद।

सही तरीका - इसी सीन को अलग तरीके से देखते हैं -

(दूध उफनते ही) सास - ओ हो! दूध उफन गया। मेरा भी दिमाग देखो, मैं बाहर गई और तुम्हें चेताकर भी नहीं गई।

बहू - ओ सॉरी मम्मी! आँखों के सामने होते हुए भी मैंने ध्यान नहीं दिया।

सास - चल कोई बात नहीं, कभी-कभी हो जाता है। (बात खत्म)।

Note 1 - किसी भी सामान्य परिस्थिति को सामान्य ही रहने देना अथवा समस्या बना देना हमारे हाथ है।

2 - कोई भी व्यक्ति यदि हमारी बात सुनकर भड़क जाए, मतलब हमें समझ लेना चाहिए कि हमसे कहीं कोई भूल हुई है।

3 - बहस में खुद को सही साबित करना और दूसरे को गलत साबित करना, दोनों ही आग में घी डालने का काम करता है। अतः इसका एक ही समाधान है, मौन हो जाना, सुनना। कोई कितना भी बोले, हमने जवाब ही नहीं दिया तो बात आई-गई हो जाएगी। जवाब दिया, तो वह बात बढ़कर अशांति का कारण बन जाएगी।

★ शालीन और सभ्य दिखने वाला व्यक्ति भी बहस करते समय भयानक लगने लगता है, क्या श्रावक के लिए भयानक रूप में होना शोभा देता है?

★ ''जिस तरह पानी का मटका किसी के मुँह नहीं लगता, वैसे ही समझदार व्यक्ति किसी के मुँह नहीं लगते। यह काम तो गिलास, कटोरी, चम्मच जैसे छोटे लोगों का है।'' (अज्ञात)

-क्रमशः श्रमणोपासक

भक्ति रस

आचार्य संघ आधार

-राखी अलिझाड़, मुक्ताईनगर

आचार्य होते हैं संघ का मजबूत आधार।
करते हैं वे ही सकल संघ का उद्धार।।

जिनके संयम, श्रुतज्ञान में समृद्धि, शरीर में प्रभावकता।
वचन कुशलता, अध्यापन, निपुणता से करते संघ संचालकता।।
उत्कृष्ट अनुशासन, बुद्धि कौशलता से करते विचार।
आचार्य होते हैं संघ का मजबूत आधार।।

आगम अनुसार करते व करवाते धर्म कर्म।
वाद प्रवीणता, कार्यकुशलता, एकाग्रता को थाम।
तिरने व तिराने वाले, रखते 36 गुणों को धार।
आचार्य होते हैं संघ का मजबूत आधार।।

अचित्त के ग्रहणहार, वैरागी, महामुनि देते धर्म दान।
कइयों को तारने वाले, गुरुवर जैनधर्म की शान।।
महाउपकारी, भद्रिक परिणामी, मौन तप से प्यार।
आचार्य होते हैं संघ का मजबूत आधार।।

श्रमणोपासक

श्रीमत् प्रज्ञापनासूत्र प्रश्नमाला

संकलनकर्ता - कंचन कांकरिया, कोलकाता

टिप्पणी :- *आगम एवं तत्त्वज्ञान के प्रसारण के लिए श्रमणोपासक में समय-समय पर तत्त्वज्ञान की विविध सीरिज प्रकाशित करने का लक्ष्य रहता है ताकि जिज्ञासु पाठकों को सरलतम मार्ग की प्रतिपूर्ति हो सके। चतुर्विध ज्ञान-साधना आगमिक बने, इस हेतु इस अंक से श्रीमत् प्रज्ञापनासूत्र प्रश्नमाला (आगम की प्रश्नमाला) प्रस्तुत की जा रही है। पाठकगण इसे अधिकाधिक जीवन में स्थान दें।*

नमो अरिहंताणं
नमो सिद्धाणं
नमो आयरियाणं
नमो उवज्झायाणं
नमो लोए सव्वसाहूणं
वयगयजर-मरणभए सिद्धे अभिवंदिऊणं तिविहेणं।
वंदामि जिणवरिंदं तेलोक्कगुरुं महावीरं।।

अर्थ - जरा, मृत्यु और भय से रहित सिद्धों को त्रिविध (मन, वचन और काया से) अभिवंदन करके त्रैलोक्यगुरु जिनवरेन्द्र भगवान महावीर को वंदन करता हूँ।

प्रश्न 1. मंगल रूप शास्त्र के प्रारंभ में मंगलाचरण क्यों किया गया है?

उत्तर 1) शुभ कार्यों में विघ्न आते हैं, उनके उपशम के लिए,

2) अशुभ कर्मों को क्षय करने के लिए और

3) पवित्र विचारधारा को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए शास्त्र के प्रारंभ में मंगलाचरण किया जाता है। (पवित्र भावों में अध्ययन करते हुए आत्मा को उज्ज्वल करें)

प्रश्न 2. श्रीमद् प्रज्ञापनासूत्र की रचना किसने और कब की?

उत्तर तत्त्व जिज्ञासुओं को तृप्ति प्रदान करने वाले श्री प्रज्ञापनासूत्र के मूलपाठ में इसके रचयिता के नाम का उल्लेख नहीं है, परंतु ऐतिहासिक तथ्यों के अनुसार भगवान महावीर स्वामी के 13वें पट्टधर 10 पूर्वी हारित गोत्रीय कालकाचार्य, जो श्यामाचार्य के नाम से प्रसिद्ध थे, उन्होंने श्री प्रज्ञापनासूत्र को पूर्वों से उद्धृत किया। इस शास्त्र का रचनाकाल वीर निर्वाण संवत् 335-376 के बीच का है। श्यामाचार्य अपने युग के महान प्रभावक आचार्य थे। आपका जन्म वीर संवत् 280 में और स्वर्गवास वीर संवत् 376 में हुआ। आपने अपने जीवन के अंतिम वर्ष (96 वर्ष की आयु) में इस आगम की रचना पूर्ण की। इन्होंने 41 वर्षों तक वाचनाचार्य और युगप्रधानाचार्य पद पर रहकर जिनशासन की महत्ती सेवा की।

प्रश्न 3 मेधा संपन्न श्यामाचार्य के विषय में विहरमान श्री सीमंधरस्वामी जी ने देवराज शक्रेंद्र को क्या कहा?

उत्तर श्री सीमंधरस्वामी जी निगोद के जीवों का वर्णन करके लोगों को दया पालने का उपदेश दे रहे थे। यहाँ उपस्थित देवराज शक्रेंद्र ने विनयपूर्वक वंदना-नमस्कार करके श्री सीमंधरस्वामी जी से पूछा- ''क्या भरत क्षेत्र में ऐसा कोई ज्ञानी महात्मा है जो आपके समान निगोद जीवों का वर्णन करने में सक्षम है?'' उन्होंने उत्तर दिया- ''हाँ, भरत क्षेत्र में श्यामाचार्य विचरण कर रहे हैं, वे श्रुतज्ञान के आधार से मेरे समान निगोद का वर्णन करने में समर्थ हैं।'' ऐसे अद्भुत प्रज्ञासंपन्न थे श्यामाचार्य।

प्रश्न 4. श्रीमद् प्रज्ञापनासूत्र की रचना किस शैली में है?

उत्तर इस शास्त्र की रचना प्रश्नोत्तर शैली में है। प्रश्नोत्तर शैली में जनसाधारण को भी परम पवित्र तत्त्वज्ञान जो अत्यत गंभीर एवं सूक्ष्म होता है, वह सरलता से समझ में आ जाता है। इसलिए श्यामाचार्य ने भी इस पद्धति को अपनाया था। प्रारंभ से 81वें सूत्र तक प्रश्नकर्ता और उत्तरदाता का कोई परिचय नहीं मिलता है। इसके पश्चात् के प्रश्नोत्तर गणधर गौतम स्वामी और भगवान महावीर के हैं। कहीं-कहीं बीच में सामान्य प्रश्नोत्तर भी हैं किंतु अनेक विषय अति जटिल हैं। ध्यातव्य है कि किनारे पर घूमने से रत्नाकर की रत्नराशि प्राप्त नहीं होती है। अत: जटिल विषयों का उत्साहपूर्वक बार-बार अध्ययन करना अपेक्षित है।

प्रश्न 5. श्रीमद् प्रज्ञापनासूत्र कौन से अंगशास्त्र का उपांग है तथा उपांग सूत्र किसे कहते हैं?

उत्तर श्रीमद् प्रज्ञापनासूत्र श्रीमद् समवायांगसूत्र का उपांग है। ऐसी धारणा प्रचलित है कि अंग शास्त्र के किसी एक विषय को लेकर विस्तार से उसकी व्याख्या जिस सूत्र में की जाती है, उसे उपांग सूत्र कहते हैं। श्रीमद् समवायांगसूत्र में जीव-अजीव आदि तत्त्वों का मुख्य रूप से वर्णन है और श्रीमद् प्रज्ञापनासूत्र में इसी से संबंधित वर्णन विस्तार से है।

प्रश्न 6. तत्त्व बोध के लिए रचित श्रीमद् प्रज्ञापनासूत्र पर वृत्ति की रचना किसने की है?

उत्तर लगभग 1600 वर्ष पूर्व 1444 ग्रंथों के रचयिता उद्भट मनीषी, स्वनामधन्य आचार्य श्री हरिभद्रसूरि जी ने इस आगम पर संक्षिप्त वृत्ति की रचना की। तत्पश्चात् लगभग 900 वर्ष पूर्व आचार्य श्री मलयगिरि जी ने पूर्वोक्त वृत्ति का आधार लेकर इस शास्त्र की विस्तृत वृत्ति की रचना की है। इन्होंने अपनी विद्वत्ता का समीचीन (यथार्थ) उपयोग करके जिनशासन की महत्ती सेवा की है।

प्रश्न 7. इस शास्त्र का नाम 'प्रज्ञापनासूत्र' क्यों है?

उत्तर जो अरिहंत भगवान के वचनों को सूचित करे वह 'सूत्र' है। इस सूत्र के प्रथम पद का नाम 'प्रज्ञापना' होने से इसका नाम 'प्रज्ञापनासूत्र' है। इस शास्त्र की विषय सामग्री 36 प्रकरणों (अर्थाधिकारों) में विभक्त है, जिन्हें 'पद' के नाम से संबोधित किया गया है।

प्रश्न 8. प्रज्ञापना शब्द का क्या अर्थ है?

उत्तर जिसके द्वारा जीव-अजीव आदि तत्त्व प्रकर्ष रूप से ज्ञापित किए जाए, उसे प्रज्ञापना कहते हैं।

(1) प्रकर्ष रूप- वस्तु स्वरूप का यथावस्थित रूप से निरूपण (विवेचना) करना यानी अच्छी तरह समझना।

(2) ज्ञापित करना- शिष्य की बुद्धि में ज्ञापित (प्रकाशित) करना।

नोट :- सर्वभावों की प्रज्ञापना की जाती है। प्रतिभा संपन्न श्यामाचार्य ने इस शास्त्र में तत्त्वों की विवेचना प्रकर्ष रूप से कर जिनशासन को गौरवान्वित किया है। हम भी ज्ञान ऋद्धि से आत्मा को गौरवान्वित करें।

साभार- श्रीमत् प्रज्ञापनासूत्र प्रश्नमाला

-क्रमश: श्रमणोपासक

श्रीमद् उत्तराध्ययन सूत्र

एकादश अध्ययन : बहुस्सुयपुज्जं

संकलनकर्ता - सरिता बैंगानी, कोलकाता

15-16 दिसंबर 2023 अंक से आगे....

पूर्व चित्रण - अबहुश्रुत एवं बहुश्रुत के अंतर का मूल कारण अविनय एवं विनय है। अभिमान, क्रोध, प्रमाद, रोग एवं आलस्य इन 5 स्थानों की उपस्थिति में साधक अबहुश्रुत कहलाता है तथा श्रुत (शिक्षा) प्राप्त करने का सामर्थ्य गँवा बैठता है। 8 स्थानों से विनीत साधक शिक्षा प्राप्त करने में समर्थ होता है। इसका वर्णन कर दिया गया है।

प्रश्न 27. अबहुश्रुतता का कथन क्यों किया गया है?

उत्तर बहुश्रुत का प्रतिपक्षी अबहुश्रुत है। बहुश्रुत एवं अबहुश्रुत का अंतर उसके परिज्ञान से ही संभावित है। इसलिए सर्वज्ञ ने अबहुश्रुत का कथन भी किया गया है।

प्रश्न 28. अबहुश्रुत को अविनीत क्यों कहा गया है?

उत्तर इस महत्त्वपूर्ण विषय को समझाने के लिए भगवान महावीर स्वामी अविनीत के लक्षण का प्रतिबोध देते हुए फरमाते हैं-

अभिक्खणं कोही हवइ, पबंधं च पकुव्वई।
मित्तिज्जमाणो वमई, सुयं लद्धूण मज्जई।।7।।
अवि पाव-परिक्खेवी, अवि मित्तेसु कुप्पई।
सुप्पियस्सावि मित्तस्स, रहे भासइ पावगं।।8।।
पइण्णवाई दुहिले, थद्धे लुद्धे अणिग्गहे।
असंविभागी अवियत्ते, अविणीए त्ति वुच्चई।।9।।

भावार्थ- 14 स्थानों में संयत मुनि अविनीत कहा जाता है। 14 अवगुण इस प्रकार हैं-

1. **अभिक्खणं कोही -** किसी कारण से या अकारण बार-बार क्रोध करने वाला एवं मृदु वचनों से उपशांत किए जाने पर भी क्रोध का परित्याग नहीं करने वाला होता है।
2. **पबंधं च पकुव्वई -** प्रबंध का अर्थ है- अविच्छेद। क्रोध को टिका कर रखने वाला अर्थात् क्रोध को लंबे समय तक हृदय में गाँठ बांधकर रखने वाला होता है।
3. **मित्तिज्जमाणो वमई -** मित्र भाव रखने की इच्छा करने वाले को ठुकरा देने वाला होता है। जैसे- कोई साधु पात्र रंगना नहीं जानता, दूसरा साधु उससे कहता है- 'मैं आपके पात्र रंग देता हूँ।' तो वह साधु सोचने लगता है कि 'मैं पात्र रंगाऊँगा तो बदले में मुझे भी इसका काम करना पड़ेगा।' अत: वह कहता है- 'रहने दीजिए, मुझे पात्र नहीं रंगवाने हैं' अथवा कोई व्यक्ति उसका कोई काम कर देता है तो भी कृतज्ञता या उपकार मानने को तैयार नहीं होता है।

4. **सुयं लद्धूण मज्जइ** – सूत्र (शास्त्रज्ञान) प्राप्त करके अहंकार करने वाला होता है। जैसे– वह अपने को ऐसा मानने लगता है कि मेरी तरह गीतार्थ विद्वान् कोई नहीं है। इस मान के वश वह अविनय करता रहता है।

5. **पाव-परिक्खेवी** – प्रस्तुत श्लोक में 'पाव' (पाप) शब्द का प्रयोग दोषपूर्ण व्यक्ति के अर्थ से किया गया है अर्थात् अविनीत व्यक्ति दोषी का तिरस्कार करता है। विनीत व्यक्ति दोष का तिरस्कार करता है, दोषी का नहीं। इन दोनों के दृष्टिकोण में बहुत अंतर होता है। जैसे– आचार्य आदि द्वारा समिति-गुप्ति आदि में स्खलना रूप पाप (गलती) हो जाने पर उनकी निंदा करता है अर्थात् जो दोषदर्शी बनकर उनके दोषों को उछालता है।

6. **मित्तेसु कुप्पई** – अपने मित्रजनों पर भी क्रोध करने वाला या नाराज रहने वाला होता है, जिसके कारण मित्रता कायम नहीं रह पाती है।

7. **सुप्पियस्सावी मित्तस्स, रहे भासइ पावगं** – प्रिय मित्र एवं हितकारी, साथी का भी एकांत में अवर्णवाद करने वाला होता है अर्थात् मित्र के समक्ष प्रिय एवं मधुर वचन कहता है किंतु पीछे-पीछे उसकी बुराई करता है।

8. **पइण्णवाई** – असंबद्धभाषी – प्रकीर्णवादी वचन कहना। इसके तीन अर्थ हैं–
   1. बिना विचार किए मन में आए वैसे ऊटपटाँग बात करने वाला होता है।
   2. पात्र-अपात्र की परीक्षा किए बिना ही शास्त्रों के गूढ़ रहस्य को बोलने वाला होता है।
   3. तथा 'यह ऐसा ही है' इस तरह एकांत पक्ष से आग्रहपूर्वक बोलने वाला होता है।

9. **दुहिले** – द्रोही अर्थात् विश्वासघाती।

10. **थद्धे** – अहंकारी अर्थात् अभिमानी।

11. **लुद्धे** – रसनेन्द्रिय के विषय में लोलुप (आसक्त)।

12. **अणिग्गहे** – अजितेन्द्रिय– इन्द्रियों को वश में नहीं करने वाला।

    नोट :– जब तक जीव मन, गंध, रस आदि की आसक्ति कम करने में आत्मबल का उपयोग नहीं करेगा, तब तक वह इन्द्रियों को अपने वश में नहीं कर सकेगा यानी इन्द्रियों के अनुशासन भाव के सुख को अनुभव नहीं कर सकेगा।

13. **असंविभागी** – साथी साधुओं में आहार आदि का विभाग नहीं करके अपना ही पोषण एवं कार्य करने वाला होता है। स्वार्थता इसका मुख्य कारण है।

14. **अवियत्ते** – अप्रीतिकर– सबको अप्रीति उत्पन्न करने वाला अर्थात् जिसको देखने पर या बुलाने पर सर्वत्र अप्रीति उत्पन्न होती है।

इन अवगुणों से युक्त मुनि ज्ञान आदि सद्गुणों को सम्यक् प्रकार से ग्रहण नहीं कर पाता है। अत: अविनीतता मोक्ष मार्ग में मूल बाधक है।

-क्रमश: श्रमणोपासक

आत्मा शरीर से भिन्न तत्त्व है किंतु यदि कोई जीव यह माने कि आत्मा शरीर से अभिन्न है, वह जड़ भौतिक तत्त्वों से बनी है तथा शरीर के नाश हो जाने पर आत्मा का भी नाश हो जाता है तो यह जीव में अजीव बुद्धि रखना है।

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री नानालाल जी म.सा.

जीव राशि का आगमिक स्वरूप

प्रश्न 1. भंते! राशियाँ कितनी कही गई हैं?

उत्तर वत्स! राशियाँ दो कही गई हैं– जीवराशि एवं अजीवराशि।

संबंधित आगम पाठ इस प्रकार है–

''दुवे रासी पण्णत्ता तं जहा–जीवरासी चेव, अजीवरासी चेव।''

–श्री स्थानांग सूत्र, स्थान 2, उद्देशक 4, सूत्र 106

[*श्री समवायांग सूत्र, सूत्र 2(1); सूत्र 149*]

प्रश्न 2. भंते! जीवराशि कितने प्रकार की है?

उत्तर वत्स! जीवराशि दो प्रकार की हैं– संसारसमापन्नक (संसारी) एवं असंसारसमापन्नक (सिद्ध)

[*–श्री समवायांग सूत्र, (प्रकीर्णक समवाय) सूत्र 149*] [1]

प्रश्न 3. भंते! क्या जीवराशि में समग्र जीवों का समावेश हो जाता है?

उत्तर हाँ, वत्स! जीवराशि में समग्र जीवों का समावेश हो जाता है।

प्रश्न 4. भंते! क्या 'अव्यवहार राशि' के नाम से कहे जाने वाले ऐसे भी जीव हैं जिनका आगमों में द्रव्येन्द्रिय-भावेन्द्रिय (श्री प्रज्ञापना सूत्र, पद 15, उद्देशक 2)[2], प्रथम-अप्रथम (श्री भगवती सूत्र, शतक 18, उद्देशक 1)[3], भव भ्रमण (श्री भगवती सूत्र, शतक 12, उद्देशक 7)[4] आदि प्रकरणों में समावेश नहीं होता है?

उत्तर वत्स! सभी संसारी जीवों का इनमें समावेश हो जाता है। 'अव्यवहार राशि' के रूप में कहीं कोई आगमिक वर्णन नहीं है।

प्रश्न 5. भंते! तो फिर 'अव्यवहार राशि' का कथन कब से प्रारंभ हुआ?

उत्तर वत्स! 'अव्यवहार राशि' तो बहुत ही अर्वाचीन अर्थात् नवीन नाम है। प्राप्त साहित्य में सर्वप्रथम 'विशेषनवति' में 'संववहारजीवरासी' (संव्यवहार जीव राशि) एवं अणाइवणस्सइरासी' (अनादिवनस्पति राशि), इन दो रूपों में जीवों को विभक्त किया गया है।

विशेषनवति का वह उल्लेख इस प्रकार है–

सिज्झंति जेत्तिया किर इह संववहारजीवरासीओ।
एंति अणाइवणस्सइरासीओ तेत्तिआ तम्मि।।

–विशेषनवति, गाथा 60

प्रश्न 6. भंते! 'विशेषनवति' की उपर्युक्त मान्यता का तात्पर्य क्या है?

उत्तर वत्स! 'विशेषनवति' की यह मान्यता आगमानुरूप नहीं है। 'विशेषनवति' में कहा है कि अनेक जीव ऐसे हैं जो अनादिकाल से वनस्पति में हैं। उन अनादिवनस्पति जीवों का समावेश आगम के 'कायस्थिति' आदि में नहीं है। वे अनादिवनस्पति जीव संव्यवहार बाह्य हैं। कायस्थिति आदि का वर्णन कुछ विशेष जीवों की अपेक्षा ही किया गया है। जितने जीव संव्यवहार जीव राशि से मोक्ष में जाते हैं, उतने ही अनादिवनस्पति से उसमें आ जाते हैं। जैसा कि विशेषनवति में कहा गया है कि–

तह कायठिईकालादओ विसेसे पडुच्च किर जीवे।
णाणाइवणस्सइणो जं संववहारबाहरिआ।।

–विशेषनवति, गाथा 59

नोट :– लेख में दिए गए टिप्पणी क्रमांक 1, 2, 3,... आदि संबंधी संदर्भ स्थल/प्रमाण पाठ लेख के अंत में क्रमानुसार दिए गए हैं।

प्रश्न 7. भंते! विशेषनवतिकार स्वयं मानते हैं कि आगमसूत्रों में अनादिवनस्पति जीवों का उल्लेख नहीं है?

उत्तर हाँ वत्स! विशेषनवतिकार स्वयं मानते हैं कि आगमसूत्रों में कहीं अनादिवनस्पति का वर्णन नहीं है किंतु उनका कहना है कि सूत्र में न होने पर भी अर्थ से ऐसा सिद्ध होता है।

प्रश्न 8. भंते! किस कारण से वे ऐसा कहते हैं कि अनादिवनस्पति की सिद्धि अर्थ से होती है?

उत्तर वत्स! वे गणितीय दृष्टि से अनादिवनस्पति का अस्तित्व स्वीकार करते हैं। उनका कहना है कि वनस्पतिकायिक की उत्कृष्ट कायस्थिति असंख्येय पुद्गल परावर्तन है। प्रतिसमय असंख्येय जीव वनस्पति से बाहर निकलकर अन्य जीवभेदों में प्रवेश करते हैं। अत: वनस्पति की राशि 'असंख्येय पुद्गल परावर्तन के समय × असंख्येय' (अधिकतम) प्रमाण है।

उपर्युक्त गुणाकार करने पर वनस्पति की राशि असंख्येय पुद्गल परावर्तन प्रमाण ही होती है। छह माह में कोई न कोई जीव अवश्य सिद्ध होता है। अत: असंख्येय पुद्गल परावर्तन प्रमाण जीव, 'असंख्येय पुद्गल परावर्तन × 6 माह का समय = असंख्येय पुद्गल परावर्तन' में ही मोक्ष चले जाएँगे। तात्पर्य यह हुआ कि आगमोक्त कायस्थिति, उद्वर्तन एवं सिद्धिगमन के वर्णनों के अनुसार सभी जीव असंख्येय पुद्गल परावर्तन में ही मोक्ष चले जाएँगे किंतु चूँकि अनंत पुद्गल परावर्तन बीत जाने पर भी अब तक सभी जीव मोक्ष में नहीं गए हैं, इससे यह अर्थ निकलता है कि आगमवर्णित जीवों के अतिरिक्त भी ऐसे अनंत जीव हैं जो अनादिकाल से वनस्पति में ही हैं तथा आगमवर्णित जीवों के मोक्ष में जाने पर वे अनादिवनस्पति भाव से हटकर आगमवर्णित जीवों की संख्या में प्रविष्ट हो जाते हैं।

उपर्युक्त विचारणा के अनुसार विशेषनवतिकार कहते हैं कि सूत्र में न होने पर भी आगम के अर्थ से अनादिवनस्पति जीवों की सिद्धि होती है।

प्रश्न 9. भंते! जब विशेषनवतिकार के उपुर्यक्त गणितीय कथन से यह स्पष्ट झलकता है कि अनादिवनस्पति को न मानने पर सभी जीवों के मोक्ष जाने की आपत्ति आ जाएगी तो आप ऐसा क्यों फरमाते हैं कि अनादिवनस्पति आगम मान्य नहीं है?

उत्तर वत्स! तुम्हारी जिज्ञासा समुचित है किंतु यह समझना आवश्यक है कि उपर्युक्त गणितीय वर्णन से अनादिवनस्पति के अस्तित्व का प्रतिभास होता है किंतु वस्तुत: ऐसा है नहीं। इसका कारण यह है कि अनादि-अनंत के अनेक वर्णनों को गणित से परिभाषित नहीं किया जा सकता है। गणित की अपनी सीमा है। सभी विषयों में गणित से सिद्धि नहीं हो पाती। उपर्युक्त विषय को ही लें। कदाचित् अनादिवनस्पति (जिसे अव्यवहार राशि कहा जाता है) मान भी ली जाए तथापि उपर्युक्त गणित से यह अर्थ स्पष्ट है कि उसमें से निकलकर संव्यवहार जीवराशि में आया हुआ जीव असंख्येय पुद्गल परावर्तनों में अवश्य मोक्ष को प्राप्त कर लेगा, जबकि आगम कहता है कि प्रत्येक जीव ने अब तक अनंत पुद्गल परावर्तन कर लिए है। उपर्युक्त गणित से यह कैसे सिद्ध हो पाएगा कि जीव ने अनंत वैक्रिय पुद्गल परावर्तन किए हैं?

आगम का एक अन्य विषय लें। श्री प्रज्ञापना सूत्र के तीसरे पद में कहा है कि जीव से काल अनंत गुणा है। गणित के अनुसार देखा जाए तो कुल जीवों से असंख्येय गुणा

(छह माह के समय प्रमाण) काल में सभी जीव मोक्ष चले जाएँगे एवं उसके बाद ऐसा अनंत काल चलेगा जब कोई जीव संसार में नहीं होगा, किंतु यह मान्यता आगम विरुद्ध है कि ऐसा कोई समय आएगा जब कोई जीव संसार में नहीं रहेगा।

यदि ऐसा माना जाए कि यह अल्पबहुत्व संव्यवहार राशिगत जीवों की अपेक्षा है। अनादिवनस्पति (अव्यवहार राशि) की अपेक्षा काल से जीव अनंत गुणा होंगे तो भी गणित की दृष्टि से समस्या आएगी कि काल के कम होने पर काल समाप्त हो जाएगा और अनंत जीव बिना काल के रहेंगे किंतु यह कल्पना भी अत्यंत अनागमिक एवं अयथार्थपरक है।

एक और आगमिक विषय लें। **श्री भगवती सूत्र, शतक 25, उद्देशक 5** में कहा है कि भूतकाल से भविष्य काल एक समय अधिक है।[5] यदि गणित को ही सर्वत्र आधार माना जाए तो ऐसा मानना होगा कि भगवान महावीर से प्रश्न पूछने के समय भूतकाल से भविष्यकाल एक समय अधिक था। उसके बाद लगभग 2600 वर्ष बीत गए हैं। अत: अब भूतकाल से भविष्यकाल 2600 वर्ष कम है किंतु ऐसा न तो कोई जिनशासन रसिक मानता है एवं न ही ऐसा मानना आगमिक है। आगमिक दृष्टि के अनुसार आज भी भूतकाल से भविष्यकाल एक समय अधिक (वर्तमान समय भविष्य में जोड़ने की अपेक्षा) है।

प्रसंगोपात्त कुछ ही ऐसे विषयों का उल्लेख किया गया है जो सुस्पष्ट करते हैं कि अनादि अनंत इत्यादि अनेक विषयों को गणित से परिभाषित नहीं किया जा सकता है।

प्रश्न 10. भंते! विशेषनवति की गणितीय चर्चा को गौण भी कर दें तो भी क्या मूल आगमपाठों से संव्यवहार जीवराशि (व्यवहार राशि) एवं अनादिवनस्पति (अव्यवहार राशि) की सिद्धि नहीं होती?

उत्तर वत्स! आगमपाठों के आधार से तो यह सिद्ध होता है कि अनादिवनस्पति (अव्यवहार राशि) जैसी कोई स्थिति है ही नहीं। ऐसे अनेकानेक आगमपाठ हैं जो यह बोध प्रदान करते हैं कि कोई भी जीव अनादिकाल से वनस्पति में रहा हो, यह सर्वथा असंभव है। कुछेक आगमोल्लेख यहाँ प्रस्तुत किए जा रहे हैं-

1. सभी जीव सभी जीवों के भाई, बहन, माता-पिता आदि अनंत बार बन चुके हैं **(श्री भगवती सूत्र, शतक 12, उद्देशक 7)**[6]।

   यह स्पष्ट है कि वनस्पति में रहते हुए तो माता-पिता आदि संबंध संभव है ही नहीं अर्थात् कोई जीव अनादिकाल से वनस्पति में नहीं है।

2. सभी जीवों ने नैरयिक, तिर्यंच, मनुष्य एवं देव- सभी रूपों में अनंत द्रव्येन्द्रियाँ, भावेन्द्रियाँ प्राप्त कर ली हैं। **(श्री प्रज्ञापना सूत्र, पद 15, उद्देशक 2)**[7]

   यह तभी संभव है जब किसी जीव को अनादिकाल से वनस्पतिकाय में न माना जाए।

3. प्रत्येक जीव अतीत काल में चारों प्रकार के संसार में रहा है। जीव का संसार में रहने का काल चारों प्रकार का रहा है- नैरयिक संसार संस्थान काल, तिर्यग्योनिक संसार संस्थान काल, मनुष्य संसार संस्थान काल, देव संसार संस्थान काल **(श्री भगवती सूत्र, शतक 1, उद्देशक 2)**[8]

   यहाँ स्पष्ट लिखा है कि जीव अतीत काल में चारों गति में रह चुका है।

4. प्रत्येक जीव ने वैक्रिय समुद्घात एवं तैजस समुद्घात अनंत बार की है। **(श्री प्रज्ञापना**

सूत्र, पद 36)[9]

इससे भी प्रत्येक जीव का अतीत में चतुर्गतिगमन स्पष्ट है।

यहाँ उन आगमसूत्रों का अतिसंक्षिप्त दिग्दर्शन मात्र किया गया है, जो यह कथन करते हैं कि कोई जीव अनादिकाल से वनस्पति में नहीं रहा है। उपर्युक्त के अतिरिक्त प्रथम-अप्रथम **(श्री भगवती सूत्र, शतक 18, उद्देशक 1)**[10], पुद्गलपरावर्तन **(श्री भगवती सूत्र, शतक 12, उद्देशक 4)**[11] आदि अनेकानेक आगमोल्लेख हैं जो इस तथ्य को सुप्रकाशित करते हैं कि सभी जीव चारों गति में अनंत बार गमन कर चुके हैं।

प्रश्न 11. भंते! आपके वचन सत्य हैं किंतु ऐसे भी तो आगमवचन हैं जो अनादिवनस्पति को सिद्ध करते हों?

उत्तर वत्स! ऐसे कौन से आगम वचन हैं जिनसे कुछ वनस्पतिकायिक जीवों की अनादिता सिद्ध होती है?

प्रश्न 12. भंते! श्री भगवती सूत्र, शतक 12, उद्देशक 7 में कहा है कि-

''अयं णं भंते! जीवे इमीसे रतणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयवाससयसहस्सेसु एगमेगंसि निरयावासंसि पुढविकाइयत्ताए जाव वणस्सइकाइयत्ताए नरगत्ताए नेरइयत्ताए उववन्नपुव्वे?

हंता गोतमा! असतिं अदुवा अणंतखुत्तो!''

-श्री भगवती सूत्र, शतक 12, उद्देशक 7, सूत्र 5(1)

यहाँ कहा है कि यह जीव रत्नप्रभा पृथ्वी में पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक रूप में एवं नैरयिक रूप में अनेक अथवा अनंत बार उत्पन्न हुआ है।

यहाँ दो विकल्प बताए हैं- 'अनेक' या 'अनंत'। इससे यह अर्थ निकलता है कि कुछ जीव अनेक बार उत्पन्न हुए हैं तथा कुछ जीव अनंत बार। इससे यह तात्पर्य समझ में आता है कि जिन जीवों को संव्यवहार राशि में आए कुछ ही समय हुआ है, वे अनेक बार उत्पन्न हुए हैं तथा जिन जीवों को संव्यवहार राशि में आए अनंतकाल बीत चुका है, वे अनंत बार उत्पन्न हुए हैं। यदि संव्यवहार राशि एवं अनादिवनस्पति (अव्यवहार राशि) का कोई भेद नहीं होता तो शास्त्रकार सिर्फ ऐसा ही कहते कि अनंत बार उत्पन्न हुआ है किंतु 'अनेक बार' अथवा 'अनंत बार' ऐसा कथन नहीं करते। अनेक बार अथवा अनंत बार का कथन क्या स्पष्टतः अनादिवनस्पति के अस्तित्व को प्रमाणित नहीं करता?

उत्तर वत्स! ''असइं अदुवा अणंतखुत्तो'' पाठ को देखकर तुम्हारे मन में विचार उठना सहज है किंतु यदि तुम आगमपाठ को गहराई से देखोगे एवं **'अदुवा'** पद के सही अर्थ को समझोगे तो तुम्हारी शंका स्वतः निर्मूल हो जाएगी।

प्रश्न 13. भंते! 'अदुवा' का अर्थ तो 'अथवा' यानी 'या' ही समझा जाता है?

उत्तर वत्स! **'अदुवा'** का अर्थ **'अथवा'** तो है किंतु 'अथवा' का अर्थ केवल **'या'** ही नहीं होता। **'अथ वा'** के अनेक अर्थ होते हैं। यहाँ **'अथ वा'** का तात्पर्य **'अर्थात्'** है। आप्टे संस्कृत कोश में **'अथ वा'** का अर्थ बताया है ''पिछली बात को संशुद्ध करते हुए। **(Correcting or modifying a previous statement)"**

An Encyclopaedic Dictionary of Sanskrit on Historical Principles में 'अथ वा' का एक अर्थ बताया है- **rather, better, or (more likely alternative)** इन दोनों कोशों के उपर्युक्त अर्थ के अनुसार 'अथ वा' का प्रयोग ऐसे स्थान

पर होता है जहाँ पहले कही गई बात को बाद में और स्पष्ट किया जाता हो, तदनुसार यहाँ आगमकार पहले 'अनेक' कहकर फिर उसे स्पष्ट करते हुए 'अनंत' कह रहे हैं। **श्रीमद् भगवती सूत्र, शतक 2, उद्देशक 3**[12] में आए इसी प्रकार के पाठ की व्याख्या करते हुए टीकाकार अभयदेवसूरि भी इसी अर्थ को पुष्ट करते हुए कहते हैं कि 'अनेक बार' से तो 'दो बार' आदि का भी अर्थ निकल सकता है किंतु वैसा नहीं है। अत: 'अत्यंत बहुत बार उत्पन्न होते हैं' यह बताने के लिए 'अनंत बार' ऐसा कहा है। वृत्तिपाठ इस प्रकार है–

''असइं ति असकृद् – अनेकश:, इदं च वेलाद्वयादावपि स्यादतोत्यन्तबाहुल्य-प्रतिपादनायाह – 'अदुव' त्ति अथवा 'अणंतखुत्तो' त्ति अनन्तकृत्वः अनन्तवारानिति।''

–श्री भगवती सूत्र, शतक 2, उद्देशक 3, सूत्र 98 की अभयदेवसूरि कृत वृत्ति, पत्रांक 130(b)

प्रश्न 14. भंते! 'अदुवा' के वास्तविक प्रासंगिक अर्थ को मैं कुछ समझ पाया हूँ किंतु आपने आगमपाठ को गहराई से देखने की जो बात फरमाई, इसका क्या तात्पर्य है?

उत्तर वत्स! यदि यहाँ ऐसा माना जाए कि जिन जीवों को संव्यवहार राशि में आए कुछ समय ही हुआ है, उनके लिए 'अनेक बार' कहा है तथा जिनको अनंतकाल बीत गया है, उनके लिए 'अनंत बार' कहा है तो यह बात आगमानुसार भी संगत नहीं होती, क्योंकि यहाँ तो वनस्पतिकायिक में उत्पन्न होने के बारे में भी ऐसा ही उल्लेख है, जैसा पृथ्वीकायिक आदि एवं नैरयिक रूप में उत्पन्न होने के संदर्भ में। जिन जीवों का 'संव्यवहार राशि' में आए अल्पकाल भी हुआ हो, वे जीव वनस्पतिकायिक के रूप में तो अनंत बार उत्पन्न हो ही चुके हैं, जबकि आगम तो वनस्पतिकायिक के रूप में भी अनेक बार अथवा अनंत बार उत्पन्न होने का कथन करता है। इससे भी यह अच्छी तरह समझ में आता है कि यहाँ 'अनेक बार' अथवा 'अनंत बार' से 'अनेक बार अर्थात् अनंत बार' यह अर्थ ही निकलता है, परंतु 'अनेक बार या अनंत बार' ऐसा अर्थ नहीं निकलता।

दूसरी बात यहाँ आगमकार 'अयं जीवे' कहकर किसी एक जीव के विषय में फरमा रहे हैं कि अमुक जीव अनेक बार अथवा अनंत बार उत्पन्न हुआ है। एक ही जीव एक ही स्थान पर अनेक बार या अनंत बार कैसे उत्पन्न होगा? इससे भी स्पष्ट है कि यहाँ 'अथवा' का अर्थ 'अर्थात्' है।

तीसरी बात यह भी विचारने योग्य है कि कोई जीव अभी-अभी संव्यवहार राशि में आया है एवं एक ही बार पृथ्वीकायिक के रूप में रत्नप्रभा पृथ्वी में उत्पन्न हुआ है, उसके लिए 'अनेक' शब्द का प्रयोग भी कैसे होगा?

चौथी बात यह है कि इस विषय में एक प्रश्न उत्पन्न होता है कि आगमों में सारा वर्णन संव्यवहार राशि वालों की अपेक्षा है या संव्यवहार राशि एवं अनादिवनस्पति दोनों की अपेक्षा? यदि संव्यवहार राशि वालों की अपेक्षा से ही वर्णन है तो संव्यवहार राशि में आने के तुरंत बाद वालों की अपेक्षा है या संख्येय काल बाद की अपेक्षा है या असंख्येय काल बाद की अपेक्षा है या अनंतकाल बाद की अपेक्षा है?

यदि कहें कि तुरंत बाद वाले या संख्येय काल बाद वाले या असंख्येय काल बाद वाले संव्यवहार राशि के जीवों की अपेक्षा आगमों का सारा वर्णन है, तो ऐसा संभव ही नहीं है क्योंकि आगमों में स्पष्टत: वनस्पति के अनंत भवों, अनंत द्रव्येन्द्रियों, अनंत बार माता-

पिता आदि बनना इत्यादि अनेकानेक ऐसे वर्णन हैं जो अतीत के अनंतकाल से संबंधित हैं। यदि आगमिक वर्णन संव्यवहार राशि में आने के अनंतकाल बाद वाले संव्यवहार राशि के जीवों की अपेक्षा माना जाए तो प्रश्न होगा कि जिन जीवों को संव्यवहार राशि में आए संख्येय या असंख्येय काल हुआ है, उन्हें संव्यवहार राशि का नाम ही कैसे दिया जा रहा है, क्योंकि उनका व्यवहार तो हो ही नहीं रहा है। यह भी विचारणीय है कि जिस जीव को संव्यवहार राशि में आए अभी-अभी अनंतकाल हुआ है (जघन्य परित्त अनंत) उस जीव के अन्य सभी जीवों के साथ अनंत बार माता-पिता आदि भव संभव ही नहीं है। फिर उस जीव का भी ग्रहण आगमिक वर्णन में नहीं हो सकेगा। कुल मिलाकर आगमिक वर्णन में ऐसे भी अनंत जीवों को ग्रहण नहीं किया जा सकेगा जिन्हें संव्यवहार राशि में आए अनंतकाल हो चुका हो। तदनुसार जिन जीवों ने अनादिवनस्पति भाव को भी छोड़ दिया है एवं जिनका आगमिक वर्णन में संव्यवहार भी नहीं है, उनके लिए किसी तीसरी राशि की कल्पना कहनी पड़ेगी, जो जिनागमों से और भी विपरीत होगी।

यदि माना जाए कि आगमिक वर्णन उन्हीं संव्यवहार राशि वाले जीवों की अपेक्षा है, जिन्होंने नैरयिक आदि में अनंत द्रव्येन्द्रियाँ कर ली हैं, सभी जीवों से अनंत बार माता-पिता आदि संबंध जोड़ लिए हैं तो फिर 'असइं अदुवा अणंतखुत्तो' का अर्थ अनेक बार या अनंत बार करना स्वत: ही विरुद्ध हो जाएगा एवं 'अनेक बार अर्थात् अनंत बार' यह अर्थ स्वत: ही सिद्ध हो जाएगा।

यदि माना जाए कि आगमिक वर्णन अनादिवनस्पति एवं संव्यवहार राशि वाले सभी जीवों की अपेक्षा हो तो ऐसा मानना भी आगम विरुद्ध होगा, क्योंकि आगम में वनस्पतिकायिक की कायस्थिति उत्कृष्टत: 'असंख्येय पुद्गल परावर्तन' ही मानी है, अनादि-अनंत नहीं। आगम के अन्यान्य सारे वर्णन भी वनस्पतिकाय को अनादि से मानने के विरुद्ध ठहरते हैं।

वत्स! आगमपाठ को गहराई से देखने से उपर्युक्त भाव सहज ही स्पष्ट हो जाते हैं एवं इससे 'असइं अदुवा अणंतखुत्तो' का तात्पर्य भी सुव्यक्त हो जाता है कि इसका अर्थ 'अनेक बार अर्थात् अनंत बार' है।

श्री भगवती सूत्र, शतक 12, उद्देशक 7, सूत्र 5(1)[13] के पाठ पर और विचार करें। वहाँ कहा है कि सभी जीव रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख निरयावासों में 'असइं अदुवा अणंतखुत्तो (अनेक बार अर्थात् अनंत बार) उत्पन्न हो चुके हैं। यदि 'अदुवा' का अर्थ 'या' ही हो तो सभी जीवों के लिए यह कैसे घटित होगा कि सभी जीव अनेक बार उत्पन्न हो चुके हैं या अनंत बार उत्पन्न हो चुके हैं। इस आगमिक कथन से भी यह स्पष्ट है कि 'असइं अदुवा अणंतखुत्तो' का अर्थ 'अनेक बार अर्थात् अनंत बार' ही है।

प्रश्न 15. भंते! मैं आपके वचनों से अनुगृहीत हुआ। मेरी एक और जिज्ञासा है कि कृपया वृत्तिकार के कथन को और स्पष्ट करें।

उत्तर वत्स! **श्री भगवती सूत्र के शतक 2, उद्देशक 3, सूत्र 98** की वृत्ति में 'असइं अदुवा अणंतखुत्तो' की व्याख्या करते हुए वृत्तिकार लिखते हैं-

'असइं' ति असकृद्-अनेकश:, इदं च वेलाद्वयादावपि स्यादतोऽत्यन्तबाहुल्य-प्रतिपादनायाह- 'अदुव' त्ति अथवा 'अणंतखुत्तो' त्ति अनन्तकृत्व: अनन्तवारानिति।

-पत्रांक 130(b)

यहाँ वृत्तिकार भी लिखते हैं 'असइं' यानी अनेक बार। अनेक का अर्थ दो आदि भी होता है, अत: अत्यंत बहुलता बताने हेतु कहते हैं 'अनंत बार'। वृत्तिकार स्पष्ट करते हैं कि अनेक शब्द से कोई दो आदि अर्थ न समझ ले, अत: शास्त्रकार कहते हैं कि यहाँ अनेक का तात्पर्य अनंत बार से ही है।

प्रश्न 16. **भंते! आपने बड़ी कृपा की। मुझे यह तो समझ में आ गया कि 'असइं अदुवा अणंतखुत्तो' इस पाठ से अनादिवनस्पति होने का अर्थ प्रकट नहीं होता किंतु इसके अतिरिक्त अन्य भी ऐसे आगम वचन हैं जो अनादिवनस्पति के अस्तित्व को व्यक्त करते हैं।**

उत्तर वत्स! कहो, ऐसे कौन से आगम वचन हैं, जिनसे अनादिवनस्पति का अस्तित्व प्रकट होता है?

प्रश्न 17. **भंते! श्री भगवती सूत्र के अठाईसवें शतक में कहा है-**

'जीवा णं भंते! पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु? कहिं समायरिंसु? गोयमा! सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा, १ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य होज्जा २, अहवा तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु य होज्जा ३, अहवा तिरिक्खजोणिएसु य देवेसु य होज्जा ४, अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य मणुस्सेसु य होज्जा ५, अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य देवेसु य होज्जा ६ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु य देवेसु य होज्जा ७ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य मणुस्सेसु य देवेसु य होज्जा ८।

भंते! जीवों ने कहाँ पापकर्म का समर्जन (ग्रहण) किया था और कहाँ समाचरण किया था?

गौतम! (1) सभी जीव तिर्यंचयोनिकों में थे (2) अथवा (सभी जीव) तिर्यंचयोनिकों और नैरयिकों में थे, (3) अथवा (सभी जीव) तिर्यंचयोनिकों और मनुष्यों में थे, (4) अथवा (सभी जीव) तिर्यंचयोनिकों और देवों में थे, (5) अथवा (सभी जीव) तिर्यंचयोनिकों, नैरयिकों और मनुष्यों में थे, (6) अथवा (सभी जीव) तिर्यंचयोनिकों, नैरयिकों और देवों में थे, (7) अथवा (सभी जीव) तिर्यंचयोनिकों, मनुष्यों और देवों में थे, (8) अथवा (सभी जीव) तिर्यंचयोनिकों, नैरयिकों, मनुष्यों और देवों में थे। (अर्थात् उन-उन गतियों-योनियों में उन्होंने पापकर्म का समर्जन और समाचरण किया था।)

सलेस्सा णं भंते! जीवा पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु? कहिं समायरिंसु? एवं चेव।

भंते! सलेशी जीवों ने कहाँ पापकर्म का समर्जन और कहाँ समाचरण किया था?

गौतम! पूर्ववत् (यहाँ सभी भंग पाए जाते हैं)

कण्हलेस्सा जाव अलेस्सा।

इसी प्रकार कृष्णलेशी जीवों (से लेकर) यावत् अलेशी जीवों तक के विषय में भी कहना चाहिए।

कण्हपक्खिया, सुक्कपक्खिया एवं जाव अणागारोवउत्ता।

कृष्णपाक्षिक, शुक्लपाक्षिक (से लेकर) अनाकारोपयुक्त तक इसी प्रकार का कथन करना चाहिए।

नेरतिया णं भंते! पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु? कहिं समायरिंसु?

गोयमा! सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा, एवं चेव अट्ठ भंगा भाणियव्वा।

भंते! नैरयिकों ने कहाँ पापकर्म का समर्जन और कहाँ समाचरण किया था?

गौतम! सभी जीव तिर्यंचयोनिकों में थे, इत्यादि पूर्ववत् आठों भंग यहाँ कहने चाहिए।

एवं सव्वत्थ अट्ठ भंगा जाव अणागारोवउत्ता।

इसी प्रकार सर्वत्र अनाकारोपयुक्त तक आठ-आठ भंग कहने चाहिए।

एवं जाव वेमाणियाणं।

इसी प्रकार (क्रम से) वैमानिक पर्यंत प्रत्येक के आठ-आठ भंग कहने चाहिए।

एवं नाणावरणिज्जेण वि दंडओ।

इसी प्रकार ज्ञानावरणीय के विषय में भी एक दंडक (8-8 भंग वाला) समझना चाहिए।

एवं जाव अंतराइएणं।

(दर्शनावरणीय से लेकर) अंतरायिक तक इसी प्रकार जानना चाहिए।

एवं एते जीवाईया वेमाणियपज्जवसाणा नव दंडगा भवंति।

इसी प्रकार जीव से लेकर वैमानिक पर्यन्त ये नौ दण्डक होते हैं।

-श्री भगवती सूत्र, शतक 28, उद्देशक 1, सूत्र 1-10

यहाँ कहा है कि 'सभी तिर्यंचों में थे' इत्यादि। क्या इस आगम पाठ से यह अर्थ प्रकट नहीं होता कि सभी जीवों का आद्यस्थान तिर्यंच योनि ही है।

उत्तर वत्स! तुम्हारी जिज्ञासा समीचीन है। उपर्युक्त पाठ के अर्थ का सम्यक् ज्ञान होने पर तुम्हारी जिज्ञासा स्वत: शांत हो सकती है।

देखो! यहाँ भगवान से यह प्रश्न पूछा जा रहा है कि नैरयिकादि सभी जीवों ने पापकर्मों का समर्जन, समाचरण कहाँ किया?

उत्तर में भगवान ने सिर्फ यह नहीं बताया कि सभी जीवों ने तिर्यंचों में पापकर्मों का समर्जन, समाचरण किया था अपितु आठ विकल्पों का कथन किया है तथा उनके बीच में 'अथवा' कहा है, अर्थात् आठों विकल्पों में से कोई भी एक विकल्प संभव है। इतना ही नहीं, ये आठों विकल्प नैरयिकों से लेकर वैमानिकों तक के सभी जीव भेदों में भी कहे गए हैं। इन सूत्रों का गहन तात्पर्य है। इन सूत्रों से यह कतई सिद्ध नहीं होता कि सभी जीवों का आद्यस्थान तिर्यंच है। एकमात्र प्रथम विकल्प न देकर आठों विकल्पों की प्रस्तुति तथा उन विकल्पों का नैरयिक आदि सभी जीववर्गणाओं (जीवसमूहों) से संबंध जोड़ना इस तथ्य को ज्ञात कराता है कि जीवों का आद्यस्थान तिर्यंच गति नहीं है। सभी अनादिकाल से चारों ही गतियों में भ्रमण करते रहे हैं।

प्रश्न 18. भंते! आगमपाठ की इन व्याख्याओं से मुझे यह विश्वास हो गया है कि तीर्थंकर देवों की दृष्टि में व्यवहार राशि एवं अव्यवहार राशि रूप कल्पित जीव भेदों का कोई अस्तित्व नहीं था। फिर भी यह विचार पुन: पुन: प्रकट होता है कि आगमों की इतनी स्पष्टता होने पर भी इस मान्यता ने इतना विस्तार कैसे प्राप्त कर लिया?

उत्तर वत्स! तुम्हारा ऐसा विचार होना साहजिक है। इस मान्यता के विस्तार का प्रमुख कारण है कि 'विशेषनवति' में जब 'जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण' ने अपने विचार प्रस्तुत किए तो तदनंतर **श्री मलयगिरि सूरि** आदि वृत्तिकारों ने इसी विचार का उल्लेख अपनी टीकाओं आदि में किया। टीकाओं के अध्ययन की व्यापकता से इस परिकल्पना ने एक मान्यता का रूप ले लिया। ज्ञातव्य है कि 'विशेषनवति' के पूर्व के ग्रन्थों में कहीं व्यवहार (संव्यवहार) एवं अव्यवहार (अनादिवनस्पति) रूप दो राशियों की

परिकल्पना नहीं है। आज भी ऐसे अनेक सम्प्रदाय हैं जो इन दो राशि संबंधी मान्यता को कतई स्वीकार नहीं करते, यथा- उपाध्याय श्री पुष्कर मुनि जी म.सा. (आचार्य श्री देवेन्द्र मुनि जी म.सा. के गुरु) की सम्प्रदाय[14], कच्छ आठ कोटि नानी पक्ष-गुजराती सम्प्रदाय[15], साधुमार्गी संघ, उत्तर भारत के शास्त्री पदमचन्द्र जी म.सा. की सम्प्रदाय[16] इत्यादि।

निवेदन- भंते! मैं उपकृत हुआ। आपश्री ने सत्यबोध देकर मुझ पर महान् उपकार किया है एवं मेरे ज्ञान नेत्रों को उन्मीलित किया है। आपश्री की ऐसी कृपा दृष्टि बनी रहे एवं मेरा ज्ञान व दर्शन विशुद्ध होता रहे।

सेवं भंते! सेवं भंते!

:::::: संदर्भ स्थल (References) ::::::

1. से किं तं जीवरासी? जीवरासी दुविहा पण्णत्ता। तं जहा- संसारसमावण्णजीवरासी य १ असंसार-समावण्णजीवरासी य २।

   -श्री समवायांग सूत्र, सूत्र 149 ('जाव' पद के अंतर्गत श्री प्रज्ञापना सूत्र, पद 1, सूत्र 14 के अनुसार)

2. एगमेगस्स णं भंते! णेरइयस्स णेरइअत्ते केवतिया दव्विंदिया अतीया? गोयमा! अणंता। केवतिया बद्धेल्लया? गोयमा! अट्ठ। केवतिया पुरेक्खडा? गोयमा! कस्सइ अत्थि कस्सइ णत्थि, जस्सऽत्थि अट्ठ वा सोलस वा चउवीसा वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा।

   एगमेगस्स णं भंते! णेरइयस्स असुरकुमारत्ते केवतिया दव्विंदिया अतीता? गोयमा! अणंता। केवतिया बद्धेल्लगा? गोयमा! णत्थि। केवतिया पुरेक्खडा? गोयमा! कस्सइ अत्थि कस्सइ णत्थि, जस्सऽत्थि अट्ठ वा सोलस वा चउवीसा वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा। एवं जाव थणियकुमारत्ते।

   एगमेगस्स णं भंते! णेरइयस्स पुढविकाइयत्ते केवतिया दव्विंदिया अतीया? गोयमा! अणंता। केवतिया बद्धेल्लया? गोयमा! णत्थि। केवतिया पुरेक्खडा? गोयमा! कस्सइ अत्थि कस्सइ णत्थि, जस्सऽत्थि एक्को वा दो वा तिण्णि वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा। एवं जाव वणप्फइकाइयत्ते।

   एगमेगस्स णं भंते! णेरइयस्स बेइंदियत्ते केवतिया दव्विंदिया अतीया? गोयमा! अणंता। केवतिया बद्धेल्लगा? गोयमा! णत्थि। केवतिया पुरेक्खडा? गोयमा! कस्सइ अत्थि कस्सइ णत्थि, जस्सऽत्थि दो वा चत्तारि वा छ वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा। एवं तेइंदियत्ते वि, णवरं पुरेक्खडा चत्तारि वा अट्ठ वा बारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा। एवं चउरिंदियत्ते वि नवरं पुरेक्खडा छ वा बारस वा अट्ठारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा।

   पंचेंदियतिरिक्खजोणियत्ते जहा असुरकुमारत्ते।

   मणूसत्ते वि एवं चेव। णवरं केवतिया पुरेक्खडा? गोयमा! अट्ठ वा सोलस वा चउवीसा वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा। सव्वेसिं मणूसवज्जाणं पुरेक्खडा मणूसत्ते कस्सइ अत्थि कस्सइ णत्थि त्ति एवं ण वुच्चति।

   वाणमंतर-जोइसिय-सोहम्मग जाव गेवेज्जगदेवत्ते अतीया अणंता; बद्धेल्लगा णत्थि; पुरेक्खडा कस्सइ अत्थि कस्सइ णत्थि, जस्सऽत्थि अट्ठ वा सोलस वा चउवीसा वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा।

   एगमेगस्स णं भंते! णेरइयस्स विजय-वेजयंत-जयंत-अपराजिय-देवत्ते केवतिया दव्विंदिया अतीया? गोयमा! णत्थि। केवतिया बद्धेल्लगा? गोयमा! णत्थि। केवतिया पुरेक्खडा? गोयमा! कस्सइ अत्थि कस्सइ णत्थि, जस्सऽत्थि अट्ठ वा सोलस वा।

सव्वट्ठसिद्धगदेवत्ते अतीया णत्थि; बद्धेल्लगा णत्थि; पुरेक्खडा कस्सइ अत्थि कस्सइ णत्थि, जस्सऽत्थि अट्ठ।

एवं जहा णेरइयदंडओ णीओ तहा असुरकुमारेण वि णेयव्वो जाव पंचेंदियतिरिक्खजोणिएणं। णवरं जस्स सट्ठाणे जति बद्धेल्लगा। तस्स तइ भाणियव्वा।

–श्री प्रज्ञापना सूत्र, पद 15, उद्देशक 2, सूत्र 1041–1042 (मजैवि.)

3. जीवा णं भंते! जीवभावेणं किं पढमा, अपढमा? गोयमा! नो पढमा, अपढमा। एवं जाव वेमाणिया।

–श्री भगवती सूत्र, शतक 18, उद्देशक 1, सूत्र 16 (मजैवि.)

4. अयं णं भंते! जीवे सव्वजीवाणं माइत्ताए पितित्ताए भाइत्ताए भगिणित्ताए भज्जत्ताए पुत्तत्ताए धूयत्ताए सुण्हत्ताए उववन्नपुव्वे? हंता, गोयमा! असइं अदुवा अणंतखुत्तो।

सव्वजीवा णं भंते! इमस्स जीवस्स माइत्ताए जाव उववन्नपुव्वा? हंता, गोयमा! जाव अणंतखुत्तो।

अयं णं भंते! जीवे सव्वजीवाणं अरित्ताए वेरियत्ताए घायगत्ताए वहगत्ताए पडिणीयत्ताए पच्चामित्तत्ताए उववन्नपुव्वे? हंता, गोयमा! जाव अणंतखुत्तो।

सव्वजीवा वि णं भंते! O एवं चेव।

अयं णं भंते! जीवे सव्वजीवाणं रायत्ताए जुगरायत्ताए जाव सत्थवाहत्ताए उववन्नपुव्वे?

हंता, गोयमा! असइं जाव अणंतखुत्तो।

सव्वजीवा णं O एवं चेव।

अयं णं भंते! जीवे सव्वजीवाणं दासत्ताए पेसत्ताए भयगत्ताए भाइल्लत्ताए भोगपुरिसत्ताए सीसत्ताए वेसत्ताए उववन्नपुव्वे? हंता, गोयमा! जाव अणंतखुत्तो।

एवं सव्वजीवा वि अणंतखुत्तो।

–श्री भगवती सूत्र, शतक 12, उद्देशक 7, सूत्र 20–23 (मजैवि.)

5. अणागयद्धा णं तीतद्धाओ समयाहिआ।

–श्री भगवती सूत्र, शतक 25, उद्देशक 5, सूत्र 42 (मजैवि.)

6. देखें, प्रमाण क्रमांक 4

7. देखें, प्रमाण क्रमांक 2

8. जीवस्स णं भंते! तीतद्धाए आदिट्ठस्स कइविहे संसारसंचिट्ठणकाले पण्णत्ते? गोयमा! चउव्विहे संसारसंचिट्ठणकाले पण्णत्ते। तं जहा–णेरइयसंसार–संचिट्ठणकाले, तिरिक्खजोणियसंसारसंचिट्ठणकाले, मणुस्ससंसारसंचिट्ठणकाले, देवसंसारसंचिट्ठणकाले य पण्णत्ते।

–श्री भगवती सूत्र, शतक 1, उद्देशक 2, सूत्र 14 (मजैवि.)

9. एगमेगस्स णं भंते! णेरइयस्स केवतिया वेदणासमुग्घाया अतीता? गोयमा! अणंता। केवतिया पुरेक्खडा?

गोयमा! कस्सइ अत्थि कस्सइ णत्थि, जस्सऽत्थि जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा।

एवं असुरकुमारस्स वि, णिरंतरं जाव वेमाणियस्स।

एवं जाव तेयगसमुग्घाए।

एवं एते पंच चउवीसादंडगा।

–श्री प्रज्ञापना सूत्र, पद 36, सूत्र 2093–2094 (मजैवि.)

10. देखें, प्रमाण क्रमांक 3

11. एगमेगस्स णं भंते! जीवस्स केवतिया ओरालिय–पोग्गलपरियट्टा अतीता? अणंता।

केवइया पुरेक्खडा? कस्सति अत्थि, कस्सति णत्थि। जस्सऽत्थि जहण्णेणं एगो वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा।

एवं सत्त दंडगा जाव आणपाणु त्ति।

एगमेगस्स णं भंते! नेरइयस्स केवतिया ओरालिय–पोग्गलपरियट्टा अतीया? अणंता।

केवतिया पुरेक्खडा? कस्सइ अत्थि, कस्सइ नत्थि। जस्सऽत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा।

एगमेगस्स णं भंते! असुरकुमारस्स केवतिया ओरालियपोग्गलपरियट्टा? एवं चेव।

एवं जाव वेमाणियस्स।

एगमेगस्स णं भंते! नेरइयस्स केवतिया वेउव्विय-पुग्गलपरियट्टा अतीया? अणंता।

एवं जहेव ओरालियपोग्गलपरियट्टा तहेव वेउव्विय-पुग्गलपरियट्टा वि भाणियव्वा।

एवं जाव वेमाणियस्स आणापाणुपोग्गलपरियट्टा। एए एगत्तिया सत्त दंडगा भवंति।

-श्री भगवती सूत्र, शतक 12, उद्देशक 4, सूत्र 18-24 (मजैवि.)

12. कति णं भंते! पुढवीओ पण्णत्ताओ? जीवाभिगमे नेरइयाणं जो बितिओ उद्देसो सो नेयव्वो।

पुढविं ओगाहित्ता निरया संठाणमेव बाहल्लं। जाव किं सव्वे पाणा उववन्नपुव्वा? हंता, गोयमा! असइं अदुवा अणंतखुत्तो।

-श्री भगवती सूत्र, शतक 2, उद्देशक 3, सूत्र 1 (मजैवि.)

13. देखें, प्रश्न क्रमांक 12

14. ''अठारहवें पद का नाम कायस्थिति है.... इसमें जीव, गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, लेश्या, सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, संयत, उपयोग, आहार, भाषक, परित्त, पर्याप्त, सूक्ष्म, संज्ञी, भव (सिद्धि), अस्ति (काय), चरिम की अपेक्षा से कायस्थिति का वर्णन है। वनस्पति की कायस्थिति 'असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा' बताई है। इसका तात्पर्य यह है कि कोई भी वनस्पति का जीव अनादिकाल से वनस्पति रूप में नहीं रह सकता। उस जीव ने वनस्पति के अतिरिक्त अन्य भव किए होने चाहिए। इससे यह स्पष्ट है कि प्रज्ञापना के रचयिता आचार्य श्याम के समय तक व्यवहारराशि-अव्यवहारराशि की कल्पना पैदा नहीं हुई थी। व्यवहारराशि-अव्यवहारराशि की कल्पना दार्शनिक युग की देन है।''

-'प्रज्ञापना : एक समीक्षात्मक अध्ययन' (श्री प्रज्ञापना सूत्र-युवाचार्य श्री मधुकर मुनि जी-प्रस्तावना) लेखक- आचार्य श्री देवेन्द्र मुनि जी 'शास्त्री', पृष्ठ 71

15. **(i)** ''व्यवहार-अव्यवहार राशि सूत्रमां क्यांय कहेल नथी। निगोदनी उत्कृष्टकाय स्थिति अढी पुद्गल परावर्तन कहेल छे। पन्नवणा सूत्र-पद 18 मां वैक्रिय पुद्गल परावर्तन जीवे अतीतकालमां अनंता कर्या छे। भविष्यमां कोई करशे कोई नहीं करे एवुं कहेल छे। पण भूतकाल माटे क्यांय कोईए नथी कर्या एवुं कहेल नथी आथी पण राशिनी मान्यता तूटे छे।''

-'धारणा', प्रकाशक- श्री आठ कोटि नानी पक्ष स्थानकवासी जैन सकल संघ, पृष्ठ 19(b)

(ii) देखें 'तत्त्वज्ञानबोध', भाग 1, पृष्ठ 95-108

16. पं. रत्न श्री दिनेश मुनि जी द्वारा लिखित लेख 'अव्यवहार राशि की मान्यता क्या आगम विरुद्ध नहीं है।' (महावीर मिशन-पत्रिका)

मजैवि. = महावीर जैन विद्यालय से प्रकाशित

साभार- जैन सिद्धांत मंजूषा श्रमणोपासक

जब तक स्वयं भगवान थे तब तक ग्यारह गणधरों के माध्यम से चतुर्विध संघ की सारणा-वारणा-धारणा होती रही। जब प्रभु ने देखा कि उनके निर्वाण का समय नजदीक आ रहा है, तब चतुर्विध संघ की बागडोर उन्होंने समर्थ हाथों में सौंपने का निर्णय लिया। उसके लिए उन्होंने गणधर गौतम का नहीं, आर्य सुधर्मा का चयन किया। उस चयन से एक बात और स्पष्ट होती है, वह यह कि उस समय राजाओं का राज्य था और राजाओं के स्तर पर परंपरा इस प्रकार बनी हुई थी कि राजा का बड़ा पुत्र ही राजा के बाद राजा बन सकता था। भगवान महावीर ने इस परंपरा में यह संशोधन किया कि कोई आवश्यक नहीं कि राजा का बेटा ही या बड़ा बेटा ही उत्तराधिकारी हो। इसी प्रकार गुरु का बड़ा शिष्य ही उत्तराधिकारी बने यह आवश्यक नहीं। गुणकर्म के धरातल पर उन्होंने नई व्यवस्था दी। गणधर गौतम उस समय केवली नहीं हुए थे। उनके रहते हुए भी आर्य सुधर्मा को पद पर नियुक्त किया गया। ऐसा उल्लेख ऐतिहासिक विवरणों से प्राप्त होता है कि भगवान महावीर ने अपनी उपस्थिति में सुधर्मा स्वामी को गणाधिप/तीर्थाधिप/गण संघ के राजा आचार्य के रूप में नियुक्त किया।

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

प्रतिबंधों का सामना

धर्ममूर्ति आनंदकुमारी

संस्कार सौरभ

15-16 दिसंबर 2023 अंक से आगे....

(आप सभी के समक्ष 'धर्ममूर्ति आनंदकुमारी' धारावाहिक के रूप में प्रकाशित हो रहा है, जिसमें आचार्य श्री हुक्मीचंद जी म.सा. की प्रथम शिष्या महासती श्री रंगू जी म.सा. की पट्टधर महासती श्री आनंदकँवर जी म.सा. का प्रेरक जीवन-चारित्र प्रतिमाह पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है।)

महान व्यक्ति किसी बाहरी अड़चन की परवाह नहीं करते, किंतु जहाँ दो ओर से एक साथ आह्वान हो रहा हो, जहाँ कर्त्तव्य-बुद्धि स्वयं दो मार्गों पर चलने की प्रेरणा करती हो, वहाँ निश्चय करना कठिन हो जाता है। उस समय अर्जुन जैसे बड़े-बड़े साधक हतप्रभ हो जाते हैं। उनकी बुद्धि भी काम नहीं देती। अर्जुन जैसे महारथी भी ऐसे नाजुक समय में अपने गांडीव-धनुष को छोड़कर किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं। सौभाग्य से वहाँ श्रीकृष्ण जैसे कुशल सलाहकार अर्जुन के समीप थे, पर यहाँ तो आप ही को स्वयं अपना कर्त्तव्य स्थिर करना था।

अड़चन यह थी कि मैं अगर किसी को बिना कहे-सुने ससुराल से चली गई तो फिर मुझे दीक्षा के लिए आज्ञा मिलनी बड़ी कठिन हो जाएगी। ससुराल वाले सोचेंगे कि यह तो हमारे कहे अनुसार नहीं चली, अपने मन से चलती है। इस प्रकार मेरा विश्वास जो इन लोगों के हृदय में जमा हुआ है वह भी चला जाएगा।

दूसरी तरफ यह बात थी कि दीक्षा लेने का मेरा विचार अब स्थायी और दृढ़ हैं। इनमें कोई परिवर्तन नहीं कर सकता। अगर मैं ऐसे ही बैठी रही तो मुझे कौन आज्ञा देगा? मैं कोई बुरा काम करने के लिए तो खड़ी नहीं हुई हूँ।

इस दुविधा में आपकी बुद्धि ने यह निर्णय लिया कि चाहे कुछ भी हो, महासती जी के पास ही चल देना चाहिए। आज्ञा नहीं देंगे तो कोई बात नहीं, मैं अपनी जिंदगी साध्वी जी की तरह रहकर बिता दूँगी। अच्छा काम करते हुए भी कोई भला-बुरा कहे तो कहे। यह तो मनुष्य का झूठा अहंकार है कि वह दूसरों को अपने अधीन समझने लगता है। अपने भाग्य का विधाता तो मनुष्य स्वयं ही है। मैं ही अपने भाग्य को पलट सकती हूँ। बस, इन्हीं विचारों का पाथेय लेकर और साथ में दो स्वर्ण मोहरें लेकर आप चल पड़ती हैं।

मध्यरात्रि में चारों ओर घोर अंधकार छाया हुआ था। स्वयं का हाथ दिखना भी कठिन हो रहा था। आस-पास मनुष्य की छाया तक नहीं थी। फिर भी देखिए, कितना साहस है। जिस कमरे मैं सोई हुई थी उस कमरे की पिछली खिड़की से एकदम निकल पड़ती हैं। कोई डर नहीं, किसी का भय नहीं। अंधकार में पैर ऊँचे-नीचे पड़ रहे हैं। कभी पैर में झटके पर झटके लगते हैं, पर आपकी गति में कोई फर्क नहीं। उपाश्रय की सीध में चल पड़ीं। उपाश्रय तो चिर-परिचित था ही। दरवाजा आने पर जरा-सा धक्का लगाया। महासती जी तो जानती थी कि आनंदकुमारी जी के सिवाय इस समय कौन आएगा। फिर भी आवाज पहचान कर द्वार खोला। महासती जी के दर्शन किए। दोनों के बीच साधारण-सी बातचीत हुई। **महासती जी** ने पूछा- ''अब तुम्हारा क्या विचार है?''

आनंदकुमारी जी- ''विचार क्या है? अब तो मैं आपकी कृपा से दृढ़ निश्चय करके आई हूँ कि आपके पास ही रहना है।''

महासती जी के पास वही पहले वाला एक ही प्रश्न था- ''आज्ञा ले आई हो?''

आनंदकुमारी जी- ''आज्ञा तो नहीं मिली।''

महासती जी- ''फिर दीक्षा कैसी?''

आनंदकुमारी जी- ''आज्ञा मिले या न मिले। अब मेरा घर लौटकर जाने का विचार नहीं है। मन आकुल हो रहा है। अब अधिक प्रतीक्षा नहीं कर सकती।''

महासती जी- ''यह नहीं हो सकता। शास्त्र का विधान है। हम उसका उल्लंघन नहीं कर सकते। पहले आज्ञा प्राप्त करो।''

आप दोनों के बीच यह बातें चल ही रही थीं कि अचानक आपकी बड़ी बहन फूलकुँवरबाई की निद्रा भंग हो गई। संयोगवश फूलकुँवरबाई उस समय महासती जी के यहाँ उपाश्रय में ही थी। उन्होंने जब अपनी बहन की आवाज सुनी तो एकदम चौंक उठीं- ''आनंद! तू इस समय कैसे आ गई? भलमानस, जरा सोचना तो था कि आधी रात है और तेरे साथ कोई नहीं है। आजकल शहरों में चोरों का काफी आतंक है। कहीं कुछ हो जाता तो महासती जी का व तुम्हारे ससुराल वालों का नाम बदनाम हो जाता। साथ ही मेरा भी मुँह काला हो जाता। भले घर की औरतें इस तरह छिपकर अकेली कहीं बाहर नहीं जातीं। तुझे तो वैराग्य का नशा छाया हुआ है, पर हमारी ओर भी कुछ ख्याल करना था। तू तो अब खुद समझदार है, ज्यादा क्या कहूँ? आज तो तू रात्रि में अकेली भाग आई हो, लेकिन भविष्य में ऐसा मत करना।''

आपने अपनी बहन के सामने निष्कपट भाव से सच्ची बात बताते हुए कहा कि मैं क्या करती? गुरुणी जी का अटूट प्रेम मुझे खींच लाया। इस कारण कई दिनों से नींद भी पूरी नहीं आ रही थी। जब देखो तब इनके दर्शनों की लालसा मन में लगी रहती। मन दर्शनों के लिए छटपटा रहा था। सबने मुझ पर महासती जी के यहाँ आने का प्रतिबंध लगा दिया। आखिर विवश होकर मुझे यही मार्ग अपनाना पड़ा।

बहन ने जब यह बात सुनी तो उसके मन में कुछ धक्का-सा लगा। बहन ने किसी तरह उन भावों को रोककर ऊपरी कठोरता दिखाते हुए कहा- ''ठीक है, जो हुआ सो हुआ। अब चल मेरे साथ। मैं तुझे अभी ससुराल पहुँचा देती हूँ। नहीं तो वे मन में सोचेंगे कि हम तो इसे इतने लाड़-प्यार से रखते हैं और यह इधर-उधर भागती फिरती है।''

बहन की बात सुनकर आप मौन रहीं और बहन के साथ ससुराल चल दीं। दृढ़निश्चयी व्यक्ति को कोई न

कोई सहायक मिल ही जाता है। वह ऐसा सुरक्षित रहता है कि तमाम आपत्तियाँ अपना-सा मुँह लेकर पलायन कर जाती हैं। फूलकुँवर बाई जिस समय आपको पहुँचाने साथ गई, उस समय उनका शरीर आभूषणों से लदा हुआ था और शहर में चोरों, डकैतों का काफी भय व्याप्त था, फिर भी प्रकृति ने उनकी सहायता की। वे आपके ससुराल तक सकुशल आपको पहुँचा कर लौट आई। प्रकृति-विजयी आत्माओं के आगे सभी भय भाग खड़े होते हैं।

आनंदकुमारी जी अकसर कहा करती थी कि मुझ पर अपनी बड़ी बहन फूलकुँवरबाई का सहज-स्नेह था। वह सौम्य स्नेह मूर्ति सब प्रकार से चतुर थीं। मैं अपनी वैराग्य की साधना करती हुई उन्हीं की छत्रछाया में अधिक आनंद का अनुभव करती थी। उनकी भव्य-प्रकृति की मेरे हृदय पर अमिट छाप अंकित है।

आप जिस खिड़की से होकर ससुराल से निकली थी, वह ज्यों की त्यों खुली पड़ी थी। उसमें किसी ने प्रवेश नहीं किया था। आप गईं और चुपचाप कमरे में प्रवेश कर खिड़की बंद करके सो गई। इस घटना का ससुराल वालों को पता ही नहीं चला।

कई दिन बीत गए। एक दिन फिर आपने सोचा कि महासती जी शहर में रहें और मैं दर्शन किए बिना रहूँ, यह कैसे हो सकता है! दिनो-दिन मन में दर्शन के लिए तड़प बढ़ रही थी। आपका चेहरा उदास रहता। किसी काम में चित्त नहीं लगता। ससुराल वाले आपकी आकृति देखकर भाँप गए कि ऐसी उदासीनता और चिंता की हालत में इन्हें यहाँ रखना ठीक नहीं, इन्हें पीहर भेज दें। वे लोग अपने आप इन पर निगरानी रखेंगे।

आपको पीहर भेज दिया गया। पीहर में आपको

जहाँ सच्ची चाह होती है वहाँ कोई न कोई राह मिल ही जाती है। **''यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी''** जिसकी जैसी भावना होती है उसे तदनुसार सिद्धि भी मिल जाती है।

पहले उपालंभ मिल चुका था, अत: आप सावधान थीं। पीहर वाले भी आपके लिए विशेष सावधानी रखने लगे। उन्होंने देखा कि कहीं यह पहले की तरह रात को साध्वी जी के पास जाना शुरू न कर दे। अत: कड़ा नियंत्रण रखा गया।

जहाँ सच्ची चाह होती है वहाँ कोई न कोई राह मिल ही जाती है। **''यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी''** जिसकी जैसी भावना होती है उसे तदनुसार सिद्धि भी मिल जाती है। आनंदकुमारी जी की माता जी को अपने पीहर से बुलावा आया। उन्होंने आपकी भाभी जी को आपकी निगरानी रखने का काम सौंपते हुए कहा कि इसे कहीं इधर-उधर जाने मत देना, तुम इनके पास सोना। आपकी भाभी ने हाँ भर ली और कहा- ''ठीक है, आप कहती हैं वैसा ही करूँगी।'' माता जी अपने पीहर बिलाड़ा चली गईं। आपकी भाभी जी पर सारे कामकाज का भार था। आपकी भाभी जी सरल स्वभावी, उदार प्रकृति की धनी थीं। आनंदकुमारी जी ने उनसे कहा- ''भाभी जी! माँ आपको मुझे साध्वी जी के यहाँ जाने नहीं देने के लिए मना किया है, पर आप तो जानती ही हैं कि मैं अब दीक्षा लेने का विचार कर चुकी हूँ। मैं महासती जी की शिष्या बनना चाहती हूँ और इस असार संसार को छोड़कर आत्मिक सुखों में रमण करना चाहती हूँ। मेरा मन अब गृहस्थ के प्रपंचों से ऊब गया है। ऐसी दशा में आप मेरे इस कार्य में बाधक क्यों बनती हैं? आप मेरी वैराग्य-वृत्ति में और सहायता करेंगी तो मैं

आपका बड़ा अहसान मानूँगी। क्या किसी का जाना-आना रोक देने से वैराग्य की वृत्ति कम हो जाती है? आप तो समझदार और सुशील हैं। मुझे महासती जी के यहाँ जाने-आने में अन्तराय न दें। रही बात माता जी की तो वे जब आप से पूछें तो मैं अपने आप उन्हें जवाब दे दूँगी। आप पर किसी भी प्रकार का उपालंभ न आने दूँगी। न पूछें तो कोई बात ही नहीं है।''

अनुनय, विनय और कोमल वचनावली सुनकर भाभी जी का दिल पिघल गया। उन्होंने आपको जाने के लिए किसी प्रकार से नहीं रोका, लेकिन इतना जरूर कहा कि माता जी के सामने कहीं मेरा नाम न ले लेना कि मैंने प्रेरणा करके आपको भेजा है। वैसे मेरी तरफ से तो मैं आपके मार्ग में बाधक नहीं बनना चाहती। आप उत्तम मार्ग अपना रही हैं। इस मार्ग पर मैं स्वयं चलने में अभी असमर्थ हूँ तो दूसरों को अन्तराय क्यों दूँ?

आपके लिए मार्ग साफ था, कोई अड़चन नहीं थी। अब तो हमेशा रात्रि में महासती जी के यहाँ चली जातीं और सूर्योदय होने से पहले आ जाती। अब आपको रात्रि में अपना ज्ञान-ध्यान सीखने का भी काफी समय मिलता। आप रात्रि में शास्त्रीय बोल व थोकड़े आदि की आवृत्ति कर लिया करती। अब दिन बड़े आनंद में व्यतीत हो रहे थे। वैराग्य का पौधा दिनो-दिन वृद्धि पा रहा था।

पर सब दिन एक जैसे नहीं होते। कभी सुख होता है तो कभी दु:ख। महाकवि कालीदास ने ठीक ही कहा है-

नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण

मनुष्य की दशा हमेशा बदलती रहती है। रथ के चक्र की तरह कभी नीचे जाती है और कभी ऊपर आती है।

महीना, सवा महीना होते ही आपकी माता जी अचानक पीहर से आ गईं। उनके आने पर अब महासती जी के दर्शनार्थ जाना आसान नहीं था। भाभी जी को भी वचन दिया हुआ था कि मैं आप पर किसी तरह का उपालंभ नहीं आने दूँगी। सो अब आप घर में ही अपनी साधना करने लगीं।

थोड़े ही दिनों में महासती जी का विहार हो गया। आपके मन में काफी खेद हुआ कि मैं विहार से पहले उनके दर्शन न कर सकी। चारित्रात्माएँ तो वायु की तरह अप्रतिबद्ध विहारी होते हैं। वे किसी के कहने से रुक नहीं सकते। गुरुणी जी के वचन आपके हृदय में गूँज रहे थे- ''तुम अपना ज्ञान-ध्यान बढ़ाती रहना। आज्ञा के लिए प्रयत्न करती रहना। अभी तुम्हारी साधना की कसौटी होनी बाकी है। अपनी आत्मा को गहराई से टटोलना। अपनी दुर्बलताओं को मिटाने का प्रयत्न करना।''

गुरुणी जी का सोजत से तो विहार हो गया था, पर आपके हृदय-मंदिर से नहीं। आपके हृदय-मंदिर में उनकी सौम्यमूर्ति विराजमान थी। आपका विशुद्ध प्रेम मन-मंदिर का प्रक्षालन कर रहा था। **''धन्यो गुरुर्देवता''**।

साभार- धर्ममूर्ति आनंदकुमारी

-क्रमश:

श्रमणोपासक

मुमुक्षु श्री यश जी कोटड़िया, नंदुरबार

परिचय में परिवार से प्राप्त शेष विवरण इस प्रकार है-

परिवार से दीक्षित :

साध्वी श्री निर्वेद श्री जी म.सा. (संसारपक्षीय बहन) साधुमार्गी

साध्वी श्री स्नेहा जी म.सा. (संसारपक्षीय बहन) अन्य संप्रदाय में

साध्वी श्री पृथ्वी जी म.सा. (संसारपक्षीय बहन) अन्य संप्रदाय में

बालमन में उपजे ज्ञान

-मोनिका जय ओस्तवाल, ब्यावर

जय जिनेन्द्र बच्चो!

नववर्ष का स्वागत बच्चों ने अपने अंदर नई प्रतिज्ञाओं और परिवर्तनों के साथ किया। सौरभ की माता जी इस बात से खुश थी कि वह बच्चों को सुनहरे भविष्य की ओर प्रेरित कर रही थी।

वर्तमान को आवश्यकता है सौरभ की माता जी जैसी माता और शिक्षिका की, जो बच्चों को एक नई राह, ज्ञान का सही मार्ग दिखा सके, अतः सभी बच्चों को नीलिमा, नितिन, पंकज और सौरभ बनने की आवश्यकता है, जो दृढ़ निश्चयी होने के साथ-साथ जिज्ञासु भी हैं।

अपनी संस्कृति को जानना, सच्चे धर्म को पहचानना और उस धर्म मार्ग पर चलना आवश्यक ही नहीं वरन् आज के समय की जरूरत है। पग-पग पर छोटे-छोटे बच्चे सही मार्गदर्शन और वातावरण के अभाव में मार्ग से भटक रहे हैं। मासूमों की ऐसी कई भयावह घटनाओं से इतिहास भरा हुआ है। सामान्य रूप से देखें तो मार्ग के भटकाव से या घटना से एक बच्चे को या परिवार को नुकसान पहुँचता है, परंतु यदि महापुरुषों की पैनी दृष्टि से देखा जाए तो ऐसी घटनाएँ पूरी पीढ़ी को कमजोर बना खोखला कर रही हैं।

अतः आप सभी पाठकों से निवेदन है कि अपने बच्चों को सही, सच्चे धर्म का मार्ग दिखाएँ, उन्हें अच्छे महानुभावों की संगत कराएँ, 'श्रमणोपासक' के 'बालमन में उपजे ज्ञान' धारावाहिक से जोड़ें और एक सुनहरे भविष्य के निर्माण हेतु संघ, समाज को योगदान दें।

आइए, जानें सौरभ की माता जी ने आज बच्चों को क्या सिखाया?

नीलिमा- जय जिनेन्द्र आंटी! कल मैं अपनी दादी जी के साथ बैठी थी तो उनसे मुझे एक अलग ही बात पता चली।

(सभी दोस्त हैरानी से- क्या?)

दादी जी बता रही थी कि हिंदू परम्परा व संस्कृति के अनुसार नया साल 1 जनवरी से शुरू नहीं होता। हमारा नया वर्ष तो चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से प्रारंभ होता है और हमारे सारे त्योहार भी उसी अनुसार मनाए जाते हैं।

पंकज- अरे! ऐसा कैसे हो सकता है! सभी जगह तो 1 जनवरी से ही होता है।

नितिन- तुम्हारी दादी जी को गलत पता होगा।

नीलिमा- (गुस्से में) मेरी दादी जी को सब सही पता है। उन्होंने कहा चैत्र तो चैत्र।

सौरभ- नीलिमा की दादी जी इतनी बड़ी हैं, वो गलत तो नहीं बताएगी ना?

पंकज- फिर यह सब क्या है? जनवरी, चैत्र दो-दो नए साल कैसे हो सकते हैं?

सौरभ की माता जी- (मुस्कुराते हुए...) हो सकते हैं, बिलकुल हो सकते हैं। नीलिमा की दादी जी भी सही हैं और नितिन भी।

(अब तो सभी बच्चे सर खुजाने लगे)

हम सभी के अनुसार कैलेंडर में नववर्ष 1 जनवरी से शुरू होता है, जिसे कैथोलिक वर्ष कहा जाता है। यह ईसाई परंपरा के अनुसार है। लेकिन हिंदू नववर्ष चैत्र माह से शुरू होता है, जो कि हमारी परंपरा के अनुसार है। अभी कैथोलिक वर्ष 2023 खत्म हुआ है और 2024 शुरू हुआ है, परंतु हिंदू परंपरा के अनुसार विक्रम संवत् 2080 खत्म होगा तो चैत्र से विक्रम संवत् 2081 शुरू होगा।

पंकज- तो आंटी! हम क्यों नहीं मानते हिंदू संवत्?

सौरभ की माता जी- बच्चो! जैसे समय के साथ रहन-सहन, खान-पान बदला, वैसे ही लोगों को इस ईसाई कैलेंडर की आदत हो गई क्योंकि इसे समझना आसान है।

नीलिमा- अब समझ आया कि यह दो-दो नववर्ष कैसे हैं?

(सौरभ की माता जी ने सभी बच्चों को हिंदू कैलेंडर की अधिक से अधिक जानकारी देने का वादा किया।)

सौरभ- आज इन सब में हम सामायिक सूत्र का अगला पाठ समझना तो भूल ही गए।

पंकज- सौरभ, भूले नहीं हैं। आज एक नई बात सीखी है हमने।

(सभी बच्चे मुस्कुराते हुए)

सौरभ की माता जी- सभी बच्चे अगली कक्षा में इच्छाकारेणं तक सभी पाठ कंठस्थ करके आएँगे और साथ ही हम आगे के पाठों का भी अध्ययन करेंगे।

प्रतिज्ञा -

1. जिस तरह नववर्ष के बारे में आपको रोचक तथ्य पता चले उसी तरह यदि आप लोगों को हिंदू परम्परा से संबंधित रोचक तथ्य पता हों तो श्रमणोपासक के लिए भेजें।
2. सप्ताह में एक दिन रहन-सहन, खान-पान सात्विक हो।

श्रमणोपासक

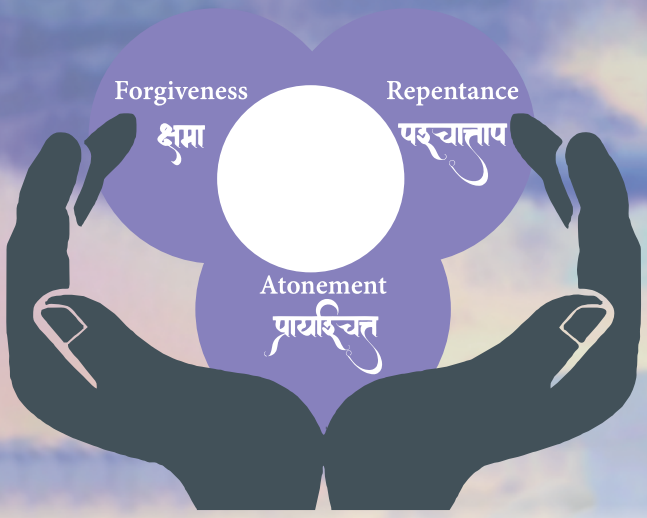

पश्चात्ताप से प्रायश्चित्त तक

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री नानालाल जी म.सा.

शुक मुनि के धर्मोपदेश से सेलगपुर के राजा शैलक विरागी बने और अपने पुत्र मंडूक को राज्यभार सम्हला कर दीक्षित हो गए।

मुनि शैलक ज्ञानार्जन और तपश्चरण की कठोर साधना में निमग्न हो गए। इतने एकरस हो गए कि शरीर को कहीं भी सुख देने का ख्याल तक न रहा। खाना, पीना, सोना, बैठना सब कुछ भूल गए। शरीर का अस्तित्व अवश्य था, परंतु उसके लिए भी कुछ कर देना है, ऐसा कोई ध्यान उनके मन में नहीं रहा। संयमाचरण ही उनके जीवन का केंद्र-बिंदु बन गया। संयम की सम्यक् अनुपालना में शरीर का उपयोग है। इतना मात्र शरीर के प्रति उनका लक्ष्य अवशेष रहा। वे प्रतिपल ज्ञान-ध्यान में ही डूबे आत्मशुद्धि हेतु प्रयासरत रहते।

किंतु..... उनकी संयम-साधना में एक 'किंतु' आ गया। राजसुख में पला हुआ उनका शरीर उस कष्टपूर्ण साधना को सह न सका। कठोर तपस्या का असर पड़ा या पूर्वार्जित अशुभ कर्मों का उदय कि वह शरीर पित्त, ज्वर एवं खाज रोग से ग्रस्त हो गया। रोग हुआ, रोग की असह्य पीड़ा उपजी, फिर भी शैलक ऋषि ने उसकी चिंता नहीं की। उन्होंने शरीर के प्रति अपने उपेक्षा भाव को नहीं तोड़ा। रोग बढ़ता रहा, शरीर गलता रहा और वे ग्रामानुग्राम विचरण करते रहे।

एक बार शैलक ऋषि सेलगपुर नगरी में पधारे। राजपरिवार और जनता को अपार हर्ष हुआ कि उनके कल के प्रजापालक राजा और आज के आत्मसाधक ऋषि का आगमन हुआ है। जनसमुदाय उनके दर्शन के लिए उमड़ पड़ा। राजा मंडूक दलबल सहित वहाँ पहुँचा। शैलक ऋषि ने सबको आत्मकल्याण का धर्मोपदेश दिया।

धर्मसभा के विसर्जित हो जाने पर राजा मंडूक वहीं रुका और मुनि के रोगग्रस्त शरीर को देखकर आग्रहपूर्वक विनती करने लगा- ''मुनिवर! आपके रोगग्रस्त शरीर को देखकर मुझे अतीव खेद हो रहा है। शरीर भी आखिर धर्म-पालन का एक साधन है और उसका सबल बना रहना आवश्यक है। हम पर आप कृपा कीजिए, नगर में पधारिए तथा मेरी ज्ञानशाला में विराजिए, ताकि आपके शरीर का समुचित उपचार कराया जा सके। स्वस्थ हो जाने पर आप पुन: विहार कर लीजिएगा।''

शैलक ऋषि ने अपने पुत्र राजा मंडूक की विनती उचित जानकर स्वीकार कर ली। उपचार शुरू हुआ और

वे पुन: स्वस्थ भी हो गए। परंतु अब उनके साथ 'किंतु' जो जुड़ गया था, वह तब तक भी छूटा नहीं, क्योंकि निरोग हो जाने पर भी उनकी इच्छा विहार करने की नहीं बनी।

जिस आत्मा ने शरीर-सुख की संपूर्ण उपेक्षा कर ली थी, वही अब शरीर-सुख में डूबने लगी और उसकी ही अपेक्षा रखने लगी। उनकी आत्मसाधना में असावधानी होना आरंभ हुई तथा मनोज्ञ अशन, पानम, खादिम, स्वादिम में उनकी मूर्च्छा बढ़ने लगी। मूर्च्छा बढ़ी, तृष्णा बढ़ी और तृष्णा बढ़ी तो आत्मा के प्रति उनका लक्ष्य शिथिल होकर शरीर-सुख के प्रति उनकी ममता अनियंत्रित बन गई। वे रात-दिन मनोज्ञ पदार्थों के सेवन का विचार करते, इन्द्रिय-सुख में मग्न रहते और उस नगरी को कभी न छोड़ने की धारणा बनाकर शरीर के ही सुख में डूबे रहते। अशुभ कर्मों का उदय हुआ, किंतु वे उनकी अशुभता को मिटाने की बजाय उनसे उपजती अशुभता में डुबकियाँ लगाने लगे।

संयमाचरण में उनके इस प्रकार के पतन से दु:खी होकर उनके शिष्यों ने विचार किया और पंथक मुनि को शैलक ऋषि की वैय्यावृत्य में नियुक्त कर गुरु आज्ञा से अन्यत्र विहार कर गए।

पंथक मुनि अपने गुरु शैलक ऋषि के समीप रहते हुए भी यथारीति संयम-पालन की चेष्टा करते तथा शुद्ध भाव से गुरु की सेवा में भी लगे रहे। यदा-कदा वे अपने गुरु से निवेदन भी करते कि हे गुरुदेव! याद कीजिए, आपने संयम की कितनी कठोर साधना की थी और शरीर की कितनी निर्मम उपेक्षा की थी। वहीं आप आज उस साधना का सर्वथा विस्मरण करके मात्र शरीर-सुख में ही क्यों डूब गए हैं? अब भी इस मूर्च्छा को दूर कर संयम-पथ पर अपने चरण आगे बढ़ा लीजिए। किंतु हर बार उनको गुरु की फटकार ही मिलती, जिसे वे सहर्ष सह लेते और उस घड़ी की प्रतीक्षा में जुट जाते जब उनके गुरु का पुनर्जागरण हो। वे इसी आशा में गुरु की सेवा में जुटे हुए थे।

इसी बीच कार्तिक मास की पूर्णिमा को चातुर्मास समाप्ति का दिन आया। इस दिन चार माह के अपने पाप-कर्मों की आलोचना के लिए चातुर्मासिक प्रतिक्रमण किया जाता है। किंतु शैलक ऋषि को आलोचना का भान कहाँ था? उन्हें तो स्वयं अपने संयम से पतन का ही भान नहीं था तो आलोचना का ध्यान आता ही कहाँ से? इस दिन भी वे प्रतिक्रमण करने की बजाय भाँति-भाँति के सुस्वादिष्ट भोजन का आनन्द लेकर निद्रा में मगन थे। कहाँ केवल आत्मा के ही ध्यान में मगन रहा कहते थे और कहाँ मात्र शरीर के ही ध्यान में डूबे रहने लगे?

इधर पंथक मुनि ने चातुर्मासिक प्रतिक्रमण किया और 'खमासमणो' द्वारा गुरु से क्षमायाचना करने के लिए शैलक ऋषि के पास पहुँचे। गुरु को सोया देखकर पंथक मुनि ने क्षमायाचना के प्रतीक स्वरूप धीरे से गुरु का चरणस्पर्श किया।

उस चरणस्पर्श से शैलक ऋषि की सुखमय निद्रा में भंग पड़ गया। निद्राभंग ने उन्हें कुपित बना दिया। शरीर-सुख के आगे शिष्य का चरण-स्पर्श भी उन्हें अखर गया। वे रोषभरे स्वर में बोल पड़े- ''देखता नहीं पंथक! तूने निष्कारण मेरी निद्रा भंग कर दी। कुछ तो विचार रखना चाहिए तुझे।''

''गुरुदेव! मैं तो आपका शिष्य हूँ। मैं तो चातुर्मासिक प्रतिक्रमण करके आपसे क्षमायाचना कर रहा था। उसी उद्देश्य से मैंने धीरे से आपका चरणस्पर्श किया, उसकी आपको चोट लग गई? कृपा कर मुझे क्षमा कीजिए। मेरा आपकी निद्रा भंग करने का कोई विचार नहीं था।''

चरणस्पर्श की चोट..... गुरुदेव सचमुच चोट खा गए। भावनाओं और विचारों का तूफान उठने लगा। वे उस तूफान में खो गए और विचार करने लगे कि एक रूप से तो मैं संयम से पतित हो कर्तव्यच्युत बन गया और मेरे शिष्य के कर्तव्य पालन पर भी मैं क्रुद्ध हो उठा। क्यों? केवल शरीर के सुख के ख्याल से! आत्मा को अकर्तव्य, अकरणीय में डुबो दिया और शरीर का ही दास हो गया मैं तो! क्या था मैं और क्या हो गया! मैं तो

शरीर की रोगग्रस्तता से भी व्यथित नहीं हुआ, परंतु स्वस्थ होकर इसी की मोहग्रस्तता में फँस गया। कितना आत्मविरोधी परिवर्तन हो गया मेरे जीवन में! मेरे केवल संयम का बाना रह गया है किंतु मैं स्वयं तो संयमहीन हो गया हूँ। चरणस्पर्श की इस चोट ने मुझे मोहग्रस्तता से मुक्त कर दिया। क्यों न मैं वितृष्णा के दलदल से बाहर निकल जाऊँ? इसी ऊहापोह में शैलक ऋषि यथार्थ में पुन: जागृत हो गए और भावनाओं व कर्मों से पुन: ऋषि बन गए। मोहनिद्रा समाप्त हुई एवं संयममय ज्ञान के आलोक से उनके अन्त:करण का कोना-कोना फिर से प्रकाशित हो उठा। पश्चात्ताप की अग्नि से उन्होंने अपनी सारी दुर्बलता जला दी और भोर होने के बाद अपने शिष्य पंथक मुनि को लेकर शैलक ऋषि ने सेलगपुर से विहार कर दिया। मूर्च्छा के एक युग को समाप्त कर लिया। वे संयम-मार्ग पर स्थिर बन गए।

पश्चात्ताप से प्रायश्चित्त और प्रायश्चित्त से कठोरतम तप:श्चरण की ओर उनके चरण बढ़ते ही रहे। वे यह समझ चुके थे कि संयम का महान शत्रु प्रमाद होता है। प्रमाद घर करता है तो शरीर-सुख का ध्यान समा जाता है और प्रमाद जितना बढ़ता है, संयम से पतन उतना ही अधिक घातक होता है। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि पतन के कटु अनुभव के पश्चात् वे अब प्रमाद का स्पर्श तक नहीं होने देंगे। वह कैसा प्रमाद जो चरणस्पर्श तक को चोट माने?

स्रोत- ज्ञाताधर्म कथा सूत्र।

सार- समय मात्र का भी प्रमाद नहीं करना चाहिए। प्रमाद से सावधान मनुष्य की दृष्टि ही कल्याण मार्ग पर स्थिर बन सकती है।

साभार- धुल गए खून के हाथ श्रमणोपासक

भक्ति रस

राम शरण सुखदाई

-ललित कटारिया, सुपल

राम हृदय उर धार लो, राम से ही आतमज्ञान।
रामचरण से मुक्ति है, राम से ही निर्वाण।।
राम राम राम राम राम, भक्ति करूँ दिन-रैन।
पल-पल राम सुमिरन करूँ, पाए मन ना चैन।।
राम हृदय आत्मीयता, करुणा निर्झर बहे।
मोह से बहु दूर जो, वीर वचन ही कहे।।
राम पवित्र मंगलकारी, सोच ऊँची सर्वश्रेष्ठ।
त्याग-वैराग्य का क्या कहना, आचरण उत्तम श्रेष्ठ।।
राम हृदय में मैत्री, कथनी-करनी सब एक।
सब जीवों से क्षमा भाव, विचार बड़े ही नेक।।
राम हृदय में भेद न कोई, दृष्टि सब पर समान।
सुखी रहे सब जीव जगत् में, हो न कोई परेशान।।
राम शरीर में व्याधियाँ कितनी, मन से नहीं कमजोर।
आत्मबल से कार्य करते, करते पुरुषार्थ पुरजोर।।
राम आत्मचिंतन में रहे, पल-पल दिन-रैन।
प्रभु आज्ञा में विचरण करते, कभी न दिखते बेचैन।।
देवता भी राम सेवा में, कर जोड़कर खड़े।
राम सान्निध्य हमें मिला, भाग्य हमारे बड़े।।
राम दृष्टि जब हो जाए, संसार सीमित हो जाए।
भीतर सोच जब बदले, तिर भवसागर से जाए।।
राम मेहनत कठोर करी, किया संघ उद्धार।
शुद्ध संयम की पालना से, कइयों के जीवन का हुआ सुधार।।
असली कर्मशत्रुओं से, बचाते हैं गुरु राम।
कहना जो मान ले, पहुँचे शिवपुर धाम।।

श्रमणोपासक

भूल को भूल समझे वह आत्मा, भूल को फूल समझे वह दुरात्मा, भूल को शूल समझे वह महात्मा, भूल करने की स्थिति से परे हो जाए वह परमात्मा।

भूल को सुधारने का मिले अवसर

-गौतम पारख, राजनांदगाँव

भूल, फूल, शूल। भूल होना अर्थात् गलती होना। भूल जाना अर्थात् याद नहीं रहना। भुलावे में रखना अर्थात् धोखा देना। भूल होना मानव के स्वभाव की एक कड़ी है। भूलना बुद्धि का कमजोर पक्ष है। भुलावे में रखना, धूर्तता, चालाकी, कपट और धोखे की निशानी है। एक दीवार पर लिखी प्रेरणादायी पक्तियों पर मेरी नजर चली गई- ''भूल को भूल समझे वह आत्मा, भूल को फूल समझे वह दुरात्मा, भूल को शूल समझे वह महात्मा, भूल करने की स्थिति से परे हो जाए वह परमात्मा।'' मैं सोचने लगा कि शब्दों का संयोजन जैसा भी हो, लेकिन आत्मा के विभिन्न स्वरूप के प्रतिपादन का तरीका अनूठा है। भूल को स्वीकार करना ही तो आत्मा से परमात्मा की ओर प्रयाण करने की प्रथम सीढ़ी है। भूल को स्वीकार करना और की गई भूल के प्रति खेदित होना, स्वयं को धिक्कारना, पश्चात्ताप करना ही तो महात्मा बनने की सीढ़ी का प्रथम पायदान है। भूल का प्रायश्चित्त लेकर उसे पुनः नहीं करने का संकल्प ही महात्मा बनने की सीढ़ी का दूसरा पायदान है। भूल का ध्यान दिलाने वाले को उपकारी मानना ही तो आत्मा के वास्तविक स्वरूप की विशेषता है। भूल को शूल समझना अर्थात् भूल को काँटा मानना। काँटा चुभ जाए तो उसको निकाले बिना चैन नहीं पड़ता। महात्माओं से भी भूल होना स्वाभाविक है। जब तक उस भूल का संशोधन, परिमार्जन, प्रायश्चित्त नहीं होता तब तक चैन नहीं होना ही तो शिखर पुरुष की निशानी है। महात्माओं को उनकी भूल का अहसास करवाने वाले नगण्य व्यक्ति होते हैं। विनय एवं विवेकपूर्वक यथासमय भूल का अहसास करवाने वाले सुज्ञजनों को जैन दर्शन में माता-पिता की उपाधि दी है। आत्मा के किसी कोने से भूल होने पर मंद, मंदतम आत्मा से आवाज आती है, लेकिन हमारा परिवेश, अहंकार, ओहदा, हमें उसका अहसास करवाने में बाधक बन जाता है।

भूल को फूल समझना ही तो हमारी नादानी है, अज्ञानता है। फूल तो उपहार में दिए जाते हैं, लेकिन भूल रूपी फूल उपहार देने के लिए नहीं बल्कि अपने अंहकार का पोषण करते हैं। वैसे अंग्रेजी में फूल का मतलब बेवकूफ या पागल होता है। अप्रैल फूल बनाने का तात्पर्य है कि उसे विश्वास दिलाकर धोखे में रखना। भूल कर आनंदित होना। भूल होने पर भी भूल को स्वीकार न करना, तर्क-कुतर्क द्वारा भूल को भी सही (फूल) साबित करना ही तो विडंबना है। दुरात्मा का अर्थ है कि ऐसी आत्मा जो भूल को फूल समझकर

सिद्धि के लिए शुद्धि जरूरी है और शुद्धि के लिए मन की सरलता जरूरी है।

गर्व महसूस करता है। भूल पर भूल, झूठ पर झूठ, कपट पर कपट ये ही दुरात्मा के लक्षण हैं। कहा गया है कि सिद्धि के लिए शुद्धि जरूरी है और शुद्धि के लिए मन की सरलता जरूरी है। सरलता के बिना शुद्धि नहीं हो सकती और शुद्धि के बिना धर्म हृदय में टिक नहीं सकता। स्वीकार व सुधार बिना सरलता भाव के नहीं आ सकते।

स्वाध्याय के क्षणों में पढ़ी हुई एक घटना स्मृतिपटल पर उभर आई। हरिसिंह जी गौड़ एक नामी वकील थे। उनको भूलने की आदत थी। भूलक्कड़ होने के कारण वे एक असिस्टेंट साथ में रखते थे ताकि वह उन्हें याद दिलाता रहे। एक बार उनके असिस्टेंट को बुखार आ गया। सोते-सोते असिस्टेंट को याद आया कि आज वकील साहब की तारीख है। कोर्ट जाना है। कहीं ऐसा न हो कि वे प्रतिपक्षी की बात करने लगे और केस जीतने के स्थान पर हार जाएँ। वह उठा और शीघ्रता से कोर्ट में पहुँचा। उसकी शंका सही निकली। गौड़ साहब प्रतिपक्षी के पक्ष में तर्क दे रहे थे। वह उनके करीब पहुँचा और धीरे से कहा- ये आप क्या कर रहे हो? आप जो तर्क प्रस्तुत कर रहे हैं उसे तो प्रतिपक्षी को प्रस्तुत करना चाहिए। वकील साहब ने कहा- तुम चिंता मत करो। मैं प्रकरण को संभाल लूँगा। वकील साहब ने अपना पैंतरा तत्काल बदला। वे कहने लगे कि अभी तक जो तर्क मैंने प्रस्तुत किए थे वे प्रतिपक्ष के वकील को करने चाहिए थे। अब मैं इन तर्कों का समाधान अपने वादी के तरफ से प्रस्तुत करता हूँ ताकि वस्तुस्थिति स्पष्ट हो सके। गौड़ जी अब बदले हुए अंदाज में आक्रामक होकर अपना पक्ष रखने लगे।

वकील की वक्रता पेशेवर होती है। वे भूल को फूल, सच को झूठ और झूठ को सच बनाने की ही फीस लेते हैं। भूल से भूलना, भूल को भी दूसरों पर थोपकर स्वयं पाक-साफ बन जाना कुटिलता की निशानी है। कपट, कुटिलता का प्राण है। कहा गया है- डॉक्टर से कपट कर रोग छिपाने वाला कभी निरोगी नहीं हो सकता। वकील से कपट कर गूढ़ बात छुपाने वाला कभी विजयी नहीं हो सकता। शिक्षक से कपट कर शिक्षा ग्रहण नहीं करने वाला विद्यार्थी कभी उत्तीर्ण नहीं हो सकता। पिता के साथ कपट भाव रखने वाला पुत्र कभी यशस्वी नहीं हो सकता। गुरु के साथ कपट रखने वाला शिष्य कभी भव पार नहीं कर सकता।

जो भूल करने की क्षमता ही खो दे वह परमात्मा कैसे बन जाता है? कहते हैं कि केवलज्ञान की प्राप्ति के बाद भूल करने की क्षमता सदा-सदा के

लिए समाप्त हो जाती है। साधना के शिखर पुरुषों से भी भूल हो जाना स्वाभाविक है। रथनेमि भगवान अरिष्टनेमि के भ्राता थे। अरिष्टनेमि का विवाह राजीमती से होना तय हो चुका था। अरिष्टनेमि बारात लेकर जा रहे थे कि उन्हें मार्ग में पशुओं का करुण क्रंदन सुनाई दिया। अरिष्टनेमि को ज्ञात हुआ कि ये पशु मारकर बारातियों को खिलाने हेतु बाड़े में रखे गए हैं। वे उन पशुओं को बाड़े से मुक्त करा बारात वापस लेकर लौट गए और जीवदया का अपूर्व संदेश दे गए। अरिष्टनेमि ने संयम दीक्षा अंगीकार कर ली। राजीमती भगवान अरिष्टनेमि के दर्शन कर लौट रही थी उस समय भारी बारिश होने लगी। महासती राजीमती एक गुफा में गीले वस्त्र सुखाने के प्रयोजन से चली गई। उस गुफा में अंधेरा था। उजाले से अंधेरे में जाने वाले को अंधेरा घनीभूत लगता है। संयोगवश उसी गुफा में रथनेमि ध्यानस्थ थे। उन्होंने हलके से उजाले में राजीमती को वस्त्र सुखाते देख लिया। उजाले से आने के कारण राजीमती को अंधेरे में कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। रथनेमि ने साधनारत रहने के बावजूद राजीमती के समक्ष भोग भोगने का प्रस्ताव रख दिया। राजीमती तत्काल सतर्क हो गई और रथनेमि को कड़ी फटकार लगाई। रथनेमि पहले शादी के लिए और अभी साधु बनने के बाद भोग-संभोग के लिए याचना कर गए। राजीमती की फटकार से रथनेमि को अपनी भूल का अहसास हुआ और वे स्वयं को धिक्कारते हुए प्रायश्चित्त करने लगे। प्रायश्चित्त कर रथनेमि स्वयं के विचारों में आए और भोग-वासना के कलुषित भावों के लिए अतिखेदित हो गए। उनकी साधना कठोर थी, फिर भी वे भटक गए। भूल का प्रायश्चित्त करते हुए उनको केवलज्ञान प्राप्त हो गया। इस तरह उनकी भूल करने की क्षमता सदा-सदा के लिए समाप्त हो गई। ऐसे महापुरुष जो उसी भव में मोक्ष जाने वाले थे, उनसे भी भूल हो गई। कठोर साधना के बीच प्रायश्चित्त करने के कारण उनकी भूल करने की क्षमता सदा-सदा के लिए समाप्त हो गई। वे परमात्मा बन गए।

प्रभु से प्रार्थना करें कि हे प्रभो! हमें भी भूल को स्वीकारने, सुधारने की शक्ति, समझ, सोच देते रहना। भूल होने पर क्षोभ, खेद, प्रायश्चित्त करने की दिशा में शुद्ध हृदय से पराक्रम करने का पाठ हमें पढ़ाते रहना।

श्रमणोपासक

गुरु चरणाश्रय

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

गुरु के चरण पकड़ने से व्यक्ति तिर जाता है, ऐसा कहा जाता है। पर प्रश्न होता है कि ऐसा होने से पुरुषार्थवाद की क्या स्थिति रहेगी? क्या बिना पुरुषार्थ के कार्य सिद्धि होगी? नहीं, ऐसा नहीं हो सकता है। कार्य सिद्धि स्वयं के पुरुषार्थ से होती है यह बात सत्य है किंतु निमित्त का भी अपना प्रभाव होता है। जैसे एक कमजोर व्यक्ति लकड़ी का सहारा लेता है तो मार्ग तय कर लेता है। जैसे एक लता किसी के सहारे से ऊपर उठ जाती है वैसे ही गुरु के चरण आध्यात्मिक साधना में सहयोगी बनते हैं। लता यदि अपने सहारे रूप बाँस आदि का आश्रय छोड़ दे तो वह ऊपर नहीं उठ सकती बल्कि नीचे गिर जाएगी। वैसे ही गुरुचरण आश्रय को यदि छोड़ दिया जाए तो साधक अपने गंतव्य लक्ष्य तक पहुँच नहीं सकता। अतः स्वयं द्वारा पुरुषार्थ करने पर भी निमित्त के रूप में गुरु चरणाश्रय आध्यात्मिक साधना में अत्यंत आवश्यक है।

साभार- नीरव का रव

धर्मसंघ एवं मानवजाति के संवाहक व उन्नायक हैं आचार्य

-पदमचन्द गाँधी, जयपुर

आचार्य वह धुरी है जिसके सहारे संघ रूप चक्र घूमता है, प्रगति करता है। धुरी जितनी मजबूत होगी, पहिए उतने ही अधिक तेजी से एवं लंबी दूरी पार कर सकेंगे। संघ की स्थापना अवश्य ही तीर्थंकर करते हैं किंतु संचालन आचार्य ही करते हैं। आचार्य एक ऐसा सेतु हैं जो भक्त और भगवान रूपी दो तटों की संधि कराते हैं। आचार्य चतुर्विध संघ को हित में जोड़ने और अहित से मोड़ने का कार्य करते हैं। इसलिए संघ रूपी रथ में आचार्य रूपी सारथी की आवश्यकता होती है। आचार्य एक ऐसी महत्त्वपूर्ण इकाई हैं जिनसे संपूर्ण संघीय व्यवस्था संचालित एवं संवर्धित होती है। आचार्य मेघ के समान होते हैं। वे संघ-समाज पर ही नहीं वरन् संपूर्ण मानव जाति पर ज्ञान, दर्शन, चारित्र रूपी वर्षा करते हैं, जिससे साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका रूप चतुर्विध संघ का जीवन उन्नत बनता है। अत: स्पष्ट है आचार्य वह संचालक होता है जो संघ को सही गति देता है, उसे आगे बढ़ाता हुआ लक्ष्य तक पहुँचाता है। आचार्य संघ के अनुशास्ता होते हैं इसलिए वे धर्म-चक्रवर्ती भी कहलाते हैं।

संघनायक के रूप में आचार्य व्यक्ति, समाज, गाँव, नगर, प्रांत, राष्ट्र एवं विश्व की संपूर्ण मानव जाति की धरोहर एवं अमूल्य निधि होते हैं। अपने तल पर उनकी उपस्थिति संसार के प्राणियों के लिए महान सुख, शांति एवं सौभाग्य की सूचक होती है। समय के पंचम काल में संपूर्ण मानव जाति विनाश की कगार पर खड़ी है। हिंसा का तांडव, अशांति, व्यभिचार एवं भोगवृत्ति की बढ़ती दुष्प्रवृत्तियों की स्थिति में आचार्य की भूमिका एवं दायित्व और भी महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं। वे चतुर्विध संघ एवं स्वयं में इन दुष्प्रवृत्तियों को रोकने के लिए कदम उठाते हैं और विश्वशांति, सौहार्द्र का संदेश देते हैं। आचार्यों का प्रभाव ही ऐसा होता है जिसका सीधा असर जनमानस पर पड़ता है। धवल वाटिका में स्पष्ट किया है-

संगहणुग्गह कुसलो, सुतत्थ-विसारओ पहिय कित्ती।
सारणा, वारणा, सोहण, किरियुज्जुत्तो हु आ इरयो।।

अर्थात् जो संघ के संग्रह (आवश्यक उपधि जुटाने, शिष्य के संरक्षण आदि) में कुशल हो, प्रायश्चित्त, दंड आदि के द्वारा अनुशासन में निपुण हो, सूत्र एवं अर्थ में विशारद हो, जिसकी कीर्त्ति फैली हुई हो, जो सारणा (करणीय आचरण), वारणा (निषेध) एवं धारणा आदि क्रियाओं में उद्धत हो वही संघ का नायक आचार्य होता है। दशवैकालिक सूत्र अ. 9 में बताया है कि चतुर्विध संघ की व्यवस्था, संघ का सुचारू रूप से संचालन, समृद्धि और संघ की सुदृढ़ता आचार्य पर ही निर्भर करती है। जैसे रात्रि के अंधकार को सूर्य की एक किरण मिटा देती है, उसी प्रकार आचार्य सारे संघ को अपने तेजस्वी रूप प्रकाश से प्रकाशमान कर देते हैं।

आचार्य धर्मसंघ एवं मानव जाति के संवाहक एवं उन्नायक होते हैं। वे संपूर्ण मानव जाति एवं संघ के हितैषी होते हैं, जिनका वर्णन इस प्रकार है-

(1) संघ के कुशल सारथी - आचार्य संघ रूपी रथ के सारथी होते हैं। अपने प्रभावक प्रवचनों के माध्यम से सूत्र-सिद्धांत की सांगोपांग जानकारी व विशिष्ट अभ्यास के साथ जिनवचनों का भावार्थ स्वयं हृदयंगम करते हुए शिष्यों को समझाते हैं, उन्हें आगे बढ़ाते हैं। ऐसे महापुरुष प्रभु द्वारा संस्थापित धर्मसंघ को एक कुशल सारथी के रूप में संचालित करते हुए मोक्षाभिलाषी साधकों को नेतृत्त्व प्रदान करते हैं। विषम परिस्थितियों में उन्हें संबल प्रदान करते हैं। उनकी साधना हेतु सहयोग व सहकार प्रदान करते हैं। उनका तपोपूत जीवन ज्ञान से आलोकित होता है। उनके जीवन में करुणा, अनुकंपा, मैत्री, वात्सल्य का निर्झर बहता है। सर्वजीवों को शासनवर्ती बनाने की पावन भावना होती है। उनके महिमामय व्यक्तित्व में संघ के सभी सदस्यों को आगे बढ़ाने एवं उनके सर्वांगीण विकास हेतु पौरुष संपन्न कृतित्व की परिणति होती है। आचार्य शिष्यों को संयम और श्रुतधर बनाने की व्यवस्था करते हैं। उन्हें महाव्रतों के निर्मल पालन, संयमधारा में स्थिरता, आज्ञापालन, परीषहों में दृढ़ता का प्रशिक्षण देते हैं। उन्हें प्रवचनदक्ष, भाषाओं में पारंगत एवं आगमों के ज्ञाता बनाते हैं। साधुओं में आपस में प्रेम व सेवा की भावना विकसित करते हैं। सम्यक् ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप में शूर बनाते हैं।

आचार्य के सदुपदेश से गृहस्थ प्रामाणिक और निर्व्यसनी होते हैं। जीवन जीते हुए कषायों में अल्पता लाते हुए एक व्रतधारी यावत् बारह व्रतधारी बनाते हैं। श्रावक-श्राविकाएँ अधिक से अधिक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करें, रात्रिभोजन का त्याग करें इसके लिए अनवरत प्रेरणा करते हैं। श्रावक समुदाय में वैमनस्य एवं मनमुटाव को दूर करने का प्रयास करते हुए प्रेम एवं सौहार्द का संदेश देते हैं।

(2) संघ की अभिवृद्धि एवं जिनशासन की प्रभावना - आचार्य स्वयं की प्रसिद्धि की चाह से दूर रहकर संघ की अभिवृद्धि एवं जिनशासन की प्रभावना का गुरुत्तर दायित्व निर्वहन करते हैं। यह गुरु की चुंबकीय शक्ति का प्रभाव होता है। आज परम पूज्य आचार्य श्री रामलाल जी म.सा. के सान्निध्य में प्रोफेशनल डिग्रीधारी युवक-युवतियाँ एवं धनाढ्य वर्ग के प्रबुद्धजन संयम की महत्ता को समझकर दीक्षित हो रहे हैं। यह आचार्य द्वारा की जाने वाली धर्मप्रभावना का ही परिणाम है। ऐसे आचार्य अपने आपको संघ का नियामक नहीं वरन् एक सेवक मानकर उसकी सारणा, वारणा, धारणा करते हैं। वे महापुरुष अपनी निष्पक्षता व एकांत शासनहित की भावना से संघ के सभी घटकों को अपनी योग्यतानुसार सर्वोत्तम विकास हेतु अभिप्रेरित करते हैं। पक्ष पोषण नहीं अपितु संघ पोषण ही उनकी शासन व्यवस्था का आधार होता है।

आचार्य वही होता है जो स्वयं निखरता है, उभरता है, विकसित होता है, बढ़ता है और दूसरों को भी बढ़ने का, विकसित होने का अवसर देता है। ऐसे शासन हितैषी भाव ही उन आचार्यों के लिए आराधकता में काम आते हैं तथा जिनशासन की अभूतपूर्व प्रभावना करते हैं। शुद्ध आचार-विचार की भूमिका पर आधारित आचार्यों ने जिनशासन की गौरव पताका फहराई है। आचार्य भद्रबाहु, हरिभद्रसूरि, हेमचंद्र, मानतुंग व लोकाशाह आदि महापुरुषों के अद्भुत त्याग-तपोबल से जिनशासन की जो प्रभावना हुई है वह इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित है। आचार्य हेमचंद्राचार्य के उपदेश से महान शक्तिशाली राजा कुमारपाल उनके अनन्य भक्त बन गए। किसी बादशाह की शहजादी के अविवाहित अवस्था में गर्भवती होने पर बादशाह द्वारा शहजादी को मृत्युदंड सुनाने पर क्षमाशूर भूधर जी म.सा. ने अपनी प्रज्ञा और तपोबल से बादशाह को समझाया कि शहजादी निर्दोष है और शहजादी के प्राण बचाए।

यतियों के कड़े और मारणांतिक प्रतिरोध के बाद पूज्य जयमल जी म.सा. ने विकट परीषह आने के बाद

भी संयम में चट्टान के समान दृढ़ रहे। महाराजा गजसिंह (बीकानेर) को झुकना पड़ा और वहाँ पर स्थानकवासी संतों का वर्चस्व बढ़ा। आचार्य देवर्धिगणि क्षमाश्रमण द्वारा आगमों को लिपिबद्ध करना, आचार्य हरिभद्र द्वारा 1444 ग्रंथों की रचना, आचार्य हेमचंद्र द्वारा साढ़े तीन लाख श्लोक प्रमाण साहित्य की रचना, इसी कड़ी में आचार्य पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. का जैन धर्म का मौलिक इतिहास, पूज्य अमोलक ऋषि जी, आत्माराम जी, युवाचार्य मधुकर मुनि जी म.सा. आदि द्वारा आगमों का संपादन-विवेचन, पूज्य आचार्य प्रवर श्री नानालाल जी म.सा. द्वारा जिणधम्मो एवं अन्य ग्रंथों की रचना आज जिनशासन की धरोहर बन चुकी है।

जिनशासन की प्रभावना के लिए, जनबल, धनबल या बाहुबल द्वारा प्रतिकूल परिस्थितियों में भी आचार्य अपनी अनुपम सूझ-बूझ से उनको सही मार्ग पर लाने का प्रयास करते हैं। यदि प्रयत्न सफल नहीं हो पाता है तो चट्टान के समान अडिग रहकर सत्य मार्ग पर कायम रहते हैं। ऐसे अनेक उदाहरण हैं।

समकित के 67 बोल का आठवाँ बोल प्रभावना का ही है। यह मैत्री संबंधों को प्रगाढ़ करते हुए जिनशासन को महामंडित करने में विशेष उपयोगी है। इतिहास साक्षी है कि अतीत काल से प्रभावी आचार्यों ने राजा-महाराजा, सेनापति, अमात्य के साथ सामान्य जनता को प्रभावित करते हुए हिंसा के तांडव को समाप्त करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। राजप्रश्नीयसूत्र में भगवान पार्श्वनाथ के शिष्य चार ज्ञान के धारक केशीश्रमण ने अधर्मिष्ठ, पापीष्ठ, क्रूर, नृशंस एवं रक्तरंजित हाथ वाले प्रदेशी राजा को प्रतिबोधित किया। सिद्धसेन दिवाकर द्वारा विक्रमादित्य को, हीरविजय द्वारा अकबर को बोध देना धर्मप्रभावना की पुष्टि है।

(3) स्थिरीकरण - संघ विकास की तीसरी इकाई स्थिरीकरण है। जिसके द्वारा संघ की लड़खड़ाती हुई स्थिति में संबल प्राप्त होता है। मोह के उदय से उत्पन्न विकारों द्वारा आचार में शिथिलता आ जाती है। पुद्गल प्रभावों से बचने के लिए विशिष्ट प्रतिभाशाली आचार्य चतुर्विध संघ को सम्यक् दिशा प्रदान करते हैं। आधुनिक साधन-प्रसाधनों के आकर्षण से जनसामान्य प्रभावित हो रहा है। इन्द्रियों के विषयों से जीवन बहिर्मुख बनता जा रहा है। उसकी बहिर्मुखता को अंतर्मुखता में बदलने हेतु आचार्य पुष्ट अवलंबन प्रदान करते हैं, जिससे गिरती इकाई में स्थिरीकरण आता है।

सिद्धसेन दिवाकर को वृद्धिवादी ने पालकी में घूमने से रोकने के लिए साधुवेश त्यागकर मजदूर वेश में पालकी उठाने वाले के साथ मिलकर पालकी उठाई और उस बहाने पालकी में घूमने वाले आचार्य सिद्धसेन को चेताते हुए धर्म में स्थिर किया। सिद्धसेन ने क्षमायाचना की और पालकी में घूमना बंद किया। ऐसे कई आचार्य हुए हैं जिन्होंने रुग्णावस्था में पालकी का उपयोग नहीं किया। आज के समय में ई-रिक्शा, डोली, पालकी, विद्युत वाले रिक्शा प्रचलन में आ रहे हैं, लेकिन दृढ़धर्मी इनका उपयोग नहीं करते हैं। संयम की दृढ़ता को मजबूत रखने का उदाहरण पेश करते हैं। हर युग में शिथिलाचारियों को दृढ़ करने हेतु क्रियोद्धारक संत एवं आचार्य हुए हैं। संघ का कोई भी घटक आस्था से डगमगाने लगे या धर्मविमुख होने लगे तो आचार्य का कर्त्तव्य होता है कि वह उन्हें धर्म में स्थिर करे।

(4) वात्सल्यभाव - जैसे गाय का वात्सल्य बछड़े के प्रति होता है, ऐसा ही वात्सल्यभाव आचार्य का संघ के प्रति होता है। सबको प्रमोद एवं आत्मीयता की अनुभूति होती है। वात्सल्यभाव के कारण ही एक-दूसरे से बंधे रहते हैं। यह तभी संभव होता है जब स्वार्थ गलता है। स्वधर्मी भाई चाहे वह किसी भी नगर में, शहर में या प्रदेश में रहता हो, वे एक-दूसरे के मित्र होते हैं। वे दूसरे के दोषों को या पापों को प्रचारित नहीं करते। उन्हें आपत्ति आने पर बंधु एक-दूसरे का सहयोग करते हैं, आपत्ति में छोड़कर नहीं जाते। आज के भौतिक युग में लोगों की धारणा बदल गई है। आपसी मनमुटाव, वैचारिक मतभेद से कई प्रकार की स्थितियाँ बन जाती हैं, ऐसी

स्थिति में आचार्य आत्मीयभाव से उन्हें प्रभावी उद्बोधन से अनुकूलता में लाते हैं।

(5) मानव समाज के प्रति सद्भाव – समाज में जैन धर्मावलंबी ही नहीं अन्य धर्मावलंबी भी निवास करते हैं। आचार्य सभी जातियों एवं धर्मों के लोगों में आपसी सद्भाव रखने, सादा जीवन उच्च विचार रखने की प्रबल प्रेरणा करते हैं। ऐसे आचार्य 36 कौम के पूजनीय-वंदनीय बन जाते हैं। क्योंकि उनकी प्रेरणा जादुई असर करती है। मांसाहारियों, कुव्यसनों, नशाखोरी से ग्रस्त जनसमूह के बीच प्रभावशाली आचार्यों के प्रवचनों से, जैनधर्म से जुड़ते हैं और उन्हें अंगीकार करते हुए जीवन को उच्च बनाते हैं।

(6) पशु-पक्षियों के प्रति करुणा-भावना – पशु-पक्षियों की हत्या, बलि आदि को रुकवाने के लिए वक्त आने पर आचार्य अपना सर आगे कर प्राण न्योछावर करने के लिए भी तैयार हुए हैं। पूज्य जयमल जी, जैन दिवाकर चौथमल जी, आचार्य हस्तीमल जी, प्रवर्त्तक पन्नालाल जी, मरुधर केसरी जी आदि अनेक आचार्यों के उदाहरण सामने हैं। आचार्य श्री हीरविजय जी म.सा. ने अकबर को प्रतिबोध देकर प्रतिदिन चिड़िया की जीभ से कलेवा करने की महाहिंसक प्रवृत्ति का त्याग करवाया।

(7) राष्ट्र उत्थान की प्रेरणा – शाकाहार, प्रामाणिकता, निर्व्यसनता आदि का प्रचार-प्रसार करने हेतु आचार्यों द्वारा आजीवन पूरे राष्ट्र में पदयात्रा करके, व्रत-प्रत्याख्यान, सामाजिक सौहार्द, बंधुत्वभाव, अहिंसा, राष्ट्रीय अखंडता, भावनात्मक एकता, राष्ट्रप्रेम की भावना देशवासियों में भरी है। समीरमुनि जी म.सा. द्वारा 'वीरवाल' समाज, आचार्य पूज्य श्री नानालाल जी म.सा. ने 'धर्मपाल' समाज तथा आचार्य श्री रामलाल जी म.सा. द्वारा 'सिरीवाल' समाज की स्थापना दलितों और गरीबों के प्रति उनका उल्लेखनीय उपकार कहा जा सकता है। आचार्य श्री जवाहरलाल जी म.सा., खादीधारी गणेशलाल जी म.सा. आदि ने स्वदेशी वस्त्र 'खादी' अपनाने की प्रेरणा दी थी।

(8) विश्व के प्रति जैनधर्म की धारणा – संघनायकों के रूप में आचार्यों ने विश्व में जैनधर्म का परचम फैलाने की भूमिका निभाई है। वर्ष 1893 में विश्वधर्म संसद शिकागो में जहाँ विवेकानंद ने भाषण दिया, उसी धर्मसभा में व्याख्यान देने हेतु आचार्य श्रीमद् विजय आत्माराम जी म.सा. ने जैनधर्म के विद्वान् राष्ट्रगौरव मुंबई के प्रसिद्ध बेरिस्टर श्री वीरचंद राघव गाँधी को प्रशिक्षण देकर तैयार किया। जिनके प्रवचन से दुनिया के प्रतिनिधि दंग रह गए। आज भी कई जैन अनुयायी आचार्यों के मार्गदर्शन में अहिंसा, अनेकांत, अपरिग्रह का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है आचार्य धर्मसंघ के साथ-साथ संपूर्ण मानव जाति के संवाहक एवं उन्नायक हैं। आज के संदर्भ में आचार्य की भूमिका की महती आवश्यकता है, जिससे समाज को नई दिशा एवं कुशल नेतृत्व मिल सके।

श्रमणोपासक

श्रमणोपासक के लिए कोरियर सुविधा प्रारंभ

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ के मुखपत्र श्रमणोपासक डाक द्वारा प्राप्त नहीं होने एवं देरी से प्राप्त होने की शिकायतें अनवरत प्राप्त हो रही हैं। इस समस्या के निवारण हेतु सभी सर्किल के पोस्ट मास्टर जनरल तक कार्यालय द्वारा शिकायतें दर्ज करवाई गईं, फिर भी डाक विभाग द्वारा उचित समाधान नहीं हो पा रहा है। इस असुविधा को ध्यान में रखते हुए संघ द्वारा पाठकों के हित में कोरियर सुविधा प्रारंभ कर दी गई है। जो भी सदस्य इस सुविधा का लाभ लेना चाहते हैं, वे व्हाट्सएप्प नं. 9799061990 पर सम्पर्क कर पूरी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

-श्रमणोपासक टीम

दीप सा प्रकाशित जिनशासन

-सुरेश बोरदिया, मुंबई

सूर्य जग के अंधकार को दूर करने के उद्देश्य से उदित होता है और अपने लक्ष्य को पूर्ण कर अस्ताचल पर पहुँच जाता है। अस्ताचल से पहले सूर्य ने विचार किया- मेरे बाद कौन? मेरे बाद कौन होगा जो मेरे अस्ताचल पर चले जाने के बाद प्रकाश करेगा? अंधकार से जग को कौन बचाएगा? सूर्य के इस विचार में कहीं कोई स्वार्थ नहीं था, सिर्फ परार्थ ही था। जिस जग को दिनभर अंधकार से बचाए रखा, वही जग रात्रि को पुन: उसी अंधकार की चपेट में न आ जाए, यह विचार स्वार्थ से बिलकुल परे और जग के भले के लिए ही था।

सूर्य ने दृष्टि घुमाई, जैसे कुछ ढूँढ़ रहा हो और वह शोधकारी दृष्टि पड़ी दीपकों के समूह पर, जिसमें हजारों की संख्या में दीपक दिखाई दिए लेकिन अब सूर्य को इन हजारों में से किसी एक को तलाशना था। सूर्य इन दीपकों को देखता गया लेकिन संतुष्ट नहीं हो पाया क्योंकि उन दीपकों में कुछ तो धरातल पर स्थिर नहीं थे, तो कुछ में तेल नहीं था, तो कुछ में बाती नहीं थी और कुछ में ये सब होते हुए भी प्रज्वलित होने की क्षमता- ज्योति का अभाव था। स्थिरता, तेल, बाती और ज्योति- इनमें से किसी एक गुण से संपन्न होना भी विशेषता ही कहीं जा सकती है, श्रेष्ठता नहीं। श्रेष्ठता के लिए तो इन चारों गुणों से संपन्न होना आवश्यक था। लेकिन सूर्य को तो श्रेष्ठ ही नहीं, सर्वश्रेष्ठ की तलाश थी। सर्वश्रेष्ठता के लिए इन चार गुणों, चार योग्यताओं के साथ-साथ एक और महागुण की आवश्यकता थी। और वह महागुण था- स्वयं की ज्योति से अन्यों को प्रज्वलित करना। सूर्य की पारखी नजरों ने ऐसा एक दीपक ढूँढ़ ही लिया जो इन सभी योग्यताओं, गुणों से संपन्न था। जो प्रश्न सूर्य के मन में था कि मेरे बाद कौन? इस प्रश्न का समाधान सूर्य ने उस दीपक में ढूँढ़ लिया कि मेरे विद्यमान न रहने पर जग का अंधकार दूर करने का कार्य यह दीपक कर सकता है।

सूर्य ने दीपक से कहा- मैं अपने गंतव्य की ओर बढ़ रहा हूँ। मेरा प्रयोजन पूर्ण होने वाला है। मेरे बाद अंधकार को दूर कर प्रकाश करने का मेरा कार्य तुम्हें करना है।

एक छोटा-सा दीपक और सूर्य द्वारा दी जाने वाली इतनी महत्तम जिम्मेदारी। सुनकर दीपक आश्चर्यचकित हो गया और बड़ी विनम्रता से निवेदन किया- ''महाराज! मुझ में इतना सामर्थ्य कहाँ कि मैं आपके कार्य को कर सकूँ! जिस महान कार्य को आपने किया है उस कार्य को कर पाने की योग्यता मुझ में कहाँ है? आप तो प्रकाश के जनक हैं और मैं... मैं तो एक छोटा-सा दीपक हूँ।'' कहते-कहते दीपक रुक सा गया और साहस करके पुन: निवेदन करने लगा- ''मुझ में न

तो इतना सामर्थ्य है, न क्षमता है कि आपके बताए हुए कार्य को कर सकूँ।''

सूर्य ने कहा– ''इस कार्य करने के लिए जो गुण चाहिए, वे सब तुझ में विद्यमान हैं। तुम धरातल पर मजबूती के साथ खड़े हो। तुम्हारे में तेल है, बाती है, ज्योति है। और इन सबसे बढ़कर तुम्हारे में अन्यों को प्रज्वलित करने की अद्भुत क्षमता विद्यमान है। जो कुछ तुम्हारे पास है, वह इस कार्य को करने के लिए पर्याप्त है।''

दीपक के लिए अब सूर्य की आज्ञा को स्वीकार करने के अलावा और कोई विकल्प नहीं था। जैसे ही सूर्य अस्ताचल पर पहुँचकर ओझल हुआ, दीपक अपने कार्य में लग गया और अपनी ज्योति से अंधकार को दूर करने लगा। अपने सामर्थ्य का पूर्ण उपयोग कर रात्रि में प्रकाश फैलाता रहा। सूर्य ने दीपक को जो उत्तरदायित्व दिया था उसका निर्वहन पूरी योग्यता के साथ किया। सूर्य का निर्णय पूर्णत: सफल रहा।

वर्तमान चौबीसी के अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर केवलज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् मध्य पावा पधारे। इन्द्रभूति आदि ग्यारह विद्वानों ने भगवान के चरणों में संयम ग्रहण कर लिया। फिर चंदनबाला एवं अनेक महिलाएँ दीक्षित हुईं। रेवती ने श्राविका व्रत और आनंद आदि ने श्रावक व्रत ग्रहण किया। इस प्रकार साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका रूप इन चार तीर्थों से चतुर्विध संघ की स्थापना भगवान महावीर ने की।

भवी जीवों को प्रतिबोध देते हुए भगवान नगर-नगर, ग्रामानुग्राम विचरण कर रहे थे। भगवान के निर्वाण के पश्चात् भी भगवान का शासन तो पाँचवें आरे के अंत तक रहेगा। शासन विद्यमान रहेगा तो शासन की व्यवस्था कौन सम्हालेगा? नेतृत्व कौन करेगा? भगवान महावीर ने इस जिनशासन को सुचारू, व्यवस्थित रूप से प्रवाहमान रखने के लिए कुशल, योग्य शिष्य को उत्तरदायित्व सौंपने का निर्णय लिया और सारी व्यवस्था एक आचार्य के रूप में केंद्रित करने के लिए प्रथम आचार्य सुधर्मा स्वामी को घोषित किया।

भगवान का निर्वाण हो जाने के पश्चात् वीर संवत् 1 कार्तिक सुदी 1 को संघ ने सुधर्मा स्वामी को आचार्य पद पर स्थापित किया और उनकी आज्ञा में रहने, चलने का संकल्प लिया। प्रथम आचार्य के रूप में सुधर्मा स्वामी से शुरू हुई आचार्य पाट परम्परा अब तक अनवरत चली आ रही है।

आचार्य पद की आवश्यकता क्यों?

भगवान का शासन है तो शासक भी चाहिए। बिना शासक के शासन कैसे सुरक्षित रहेगा? शासन भी दो प्रकार के होते हैं– एक तो जिनशासन और दूसरा सत्ता रूपी शासन या सरकार। सरकार संविधान के आधार पर चलती है तो जिनशासन भगवान के दिए सिद्धांतों पर उनकी बताई हुई आज्ञानुसार चलता है। दोनों में काफी अंतर है, लेकिन एक समानता है– नेतृत्व। दोनों शासन नेतृत्व के आधार पर चलते हैं।

जिनशासन तीर्थंकर भगवंतों के द्वारा दिया हुआ है। इसकी पवित्रता एवं महिमा अवर्णनीय है। जिनशासन इतना महान है तो उसका नेतृत्व करने वाले आचार्य की महिमा कितनी महान होगी उसका अनुमान लगाना बड़ा ही कठिन कार्य है। शासन के अनुरूप ही तो शासक की महिमा होती है। रियासत का नाम सुनकर उसके शासक का नाम स्वत: ही याद आ जाता है। जैसे– मेवाड़ नाम सुनते ही महाराणा प्रताप एवं मराठा नाम से छत्रपति शिवाजी का नाम। क्यों? क्योंकि उन रियासतों के इन शासकों ने अपने प्रताप, अपने बल एवं अपनी क्षमता से सुरक्षित रखा और इसकी प्रगति का प्रयास किया।

रियासत हो या अन्य कोई शासन, उसकी सुरक्षा, प्रगति, उत्थान के लिए नेतृत्व की नितान्त आवश्यकता है। बचपन से देखते आए हैं कि पाठशाला में कक्षा स्तर पर नेतृत्व के लिए मॉनिटर नियुक्त किए जाते हैं। समाज में भी नेतृत्व रहता ही है। सरकार में भी जिला, राज्य, राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर नेतृत्व की आवश्यकता

रहती है। बिना नेतृत्व के विकास कैसे संभव है?

केवल मनुष्य ही नहीं, तिर्यंच जीवों में भी नेतृत्व की आवश्यकता रहती है। मधुमक्खी के एक छत्ते में हजारों मधुमक्खियाँ रहती हैं, लेकिन उनमें भी नेतृत्व के तौर पर रानी मधुमक्खी के अनुशासन में सभी मधुमक्खियाँ चलती हैं और उसी से वे सब सुरक्षित रहती हैं।

पवित्र जिनशासन तीर्थंकरों का बनाया हुआ है और प्रारंभिक सिंचन भी उन्होंने ही किया है। उनके बाद आचार्य के नेतृत्व की शुरुआत हुई। शासन हो या संस्था, नेतृत्व के बिना विकास नहीं हो पाता। संघ एवं जिनशासन के विकास के लिए ही तो आचार्य पाट-परम्परा चलती आ रही है। जिन नहीं पर जिन सरीखे, केवली नहीं पर केवली सरीखे ऐसे आचार्य भगवन् पवित्र कल्याणकारी जिनशासन को निर्बाध रूप से प्रवर्धमान करते आ रहे हैं।

सूर्य ने दीपक को जो उत्तरदायित्व दिया था, वह उसकी योग्यता, क्षमता, सामर्थ्य देखकर ही दिया था। दीपक का धरातल पर स्थिर टिके रहना उसकी सबसे पहली योग्यता है। यदि तेल, बाती व ज्योति हो, लेकिन स्थिरता नहीं तो वे सब किस काम के? यदि स्थिर हो , पर तेल, बाती व ज्योति नहीं हो तो? और इतना सब कुछ होने पर भी अन्यों को प्रज्वलित करने की क्षमता न हो तो? अत: सूर्य ने सभी तरह की योग्यता देखकर ही यह महत्त्वपूर्ण दायित्व दिया था।

भगवान महावीर ने सुधर्मा स्वामी को इसी तरह कई योग्यताओं से संपन्न देखकर इस महान जिनशासन का उत्तरदायित्व सौंपा था। अपने हजारों शिष्यों में से किसी एक को यह पद सौंपना बहुत ही महत्त्वपूर्ण निर्णय था। सुधर्मा स्वामी ने कुशलता के साथ इसकी व्यवस्था को सुचारू रूप दिया। आज लगभग 2600 वर्ष हो जाने के बाद भी यह पाट-परम्परा अखंड ज्योति बनकर जिनशासन को आलोकित कर रही है।

आचार्य जिनशासन के शासक तो होते ही हैं, क्योंकि जिनशासन की बागडोर उनके हाथ में होती है। शासक से ज्यादा सही अर्थ में तो वे अनुशासक होते हैं। वे स्वयं अनुशासन में रहते हुए जिनशासन का अनुशासन बनाए रखते हैं।

आचार्य श्री चौथमल जी म.सा. के जीवन चारित्र का एक प्रेरक प्रसंग हैं- ''वृद्धावस्था में खड़े-खड़े प्रतिक्रमण करने जैसी शारीरिक स्थिति नहीं थी, फिर भी आपश्री जी लकड़ी के सहारे खड़े होकर प्रतिक्रमण करते। सहवर्ती संतों एवं श्रावकों ने निवेदन किया कि आपश्री जी की शारीरिक कमजोरी को देखते हुए आप खड़े न रहकर बैठे-बैठे ही प्रतिक्रमण करने की कृपा करावें। तो आपश्री जी ने फरमाया कि प्रतिक्रमण तो साधु की आवश्यक क्रिया है। अगर मैं बैठकर प्रतिक्रमण करूँगा तो हो सकता कि भविष्य में मेरे शिष्य संत कहीं सोते-सोते न करने लग जाए।''

कितना अनुशासन? यहाँ पूज्यश्री शासक नहीं, अनुशासक थे। उनका अनुशासित जीवन अन्यों के लिए प्रेरणादायी बन गया। उनका यह अनुशासन जिनशासन के इतिहास में अमर-अमिट बन गया।

आचार्य श्री हुक्मीचंद जी म.सा. से वर्तमान आचार्य प्रवर श्री रामलाल जी म.सा. इस परम्परा को सुशोभित कर रहे हैं। एक दीपक जिसने सूर्य के ओझल होने के बाद सूर्य की आज्ञा का पालन किया और उस प्रज्वलित दीप की ज्योति से अन्य ज्योतियाँ प्रज्वलित होती गई और अन्यों को प्रकाश से भरती गईं।

भगवान महावीर की पाट-परम्परा इसी तरह प्रवर्द्धमान है। वर्तमान आचार्य भगवन् स्वयं अनुशासन से जिनशासन की कीर्ति, महिमा को सुरक्षित रखते हुए इसकी महिमा बढ़ाकर आचार्य पद की गरिमा में चार चाँद लगा रहे हैं।

हमें भी आवश्यकता है उनकी आज्ञा को शिरोधार्य करने की, उनके अनुशासन को जीवन में उतारने की, उन चरणों में समर्पण की।

श्रमणोपासक

गुणपरक दृष्टि

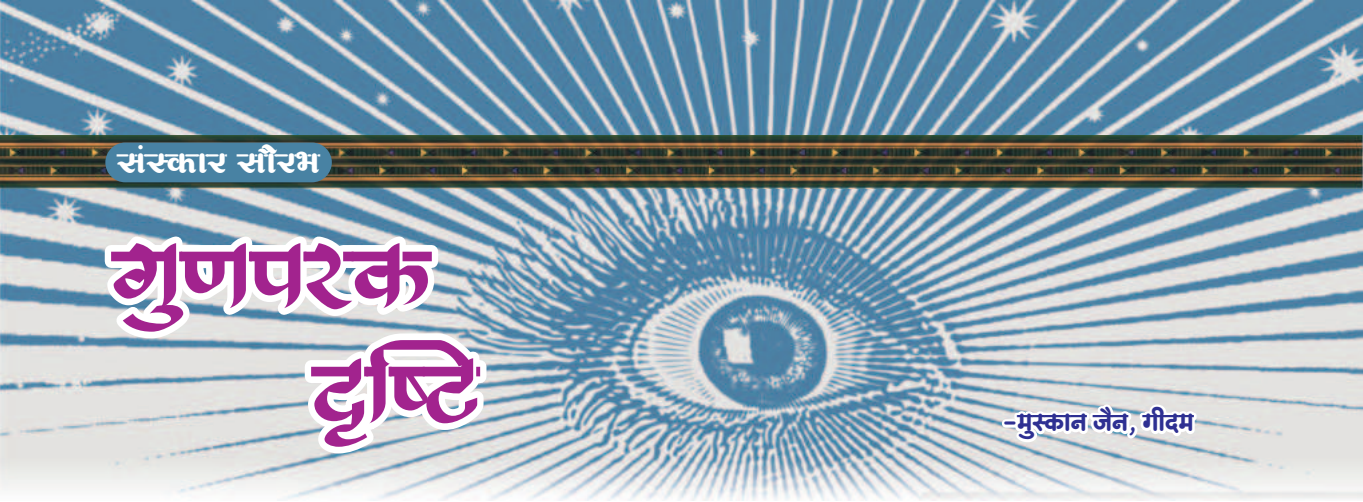

-मुस्कान जैन, गीदम

'मन चंगा तो कठौती में गंगा' लेकिन क्या हमारा मन चंगा है? स्वच्छता अभियान से शहर स्वस्थ हो जाएँगे। वैक्यूम क्लीनर जैसे साधनों से घर साफ हो जाएँगे। अच्छी दिनचर्या और संतुलित आहार से शरीर स्वस्थ हो जाएगा, लेकिन हमारी आत्मा कैसे निरोगी बनेगी?

इन्हीं बिंदुओं पर गहन चिंतन-मनन के बाद हमारे गुरुवर परम पूज्य आचार्य प्रवर श्री रामलाल जी म.सा. ने **'आध्यात्मिक आरोग्यम्'** की संकल्पना प्रस्तुत की है, जिसके अंतर्गत नौ आयाम फरमाए हैं। विशेष अर्थ में इसे कल्पवृक्ष की संज्ञा भी दी जा सकती है, जिसके पालन से निश्चित ही सभी मनोकामनाएँ पूर्ण होंगी।

इस आध्यात्मिक आरोग्यम् रूपी कल्पवृक्ष का पहला आयाम है- गुणपरक दृष्टि अर्थात् ऐसी दृष्टि जो केवल गुण ही देखे। बात यदि पेड़-पौधों, जीव-जंतुओं की करें तो हमारी दृष्टि बिलकुल गुणपरक है। फलत: हमें गुलाब की खुशबू, सुंदरता ही दिखती है, उसके काँटे नहीं और कोयल की मधुर आवाज से उसकी पहचान करते हैं, न कि उसके काले रंग से।

यही बात जब व्यक्ति के संदर्भ में आती तो हमारी दृष्टि दोषों में ही अटक जाती है। जैसे- रावण का सीता को हरण करना उसके पांडित्य से भारी लगता है। माँ की ममता के आगे माँ का क्रोध दिखता है। पर क्या ये सही है? इन बातों को ध्यान में रखते हुए ही आध्यात्मिक आरोग्यम् का पहला आयाम गुणमय दृष्टि का विकास है।

जिनशासन एवं धार्मिक कथाओं में गुणमय दृष्टि के उदाहरणों की भरमार है। शुरुआत यदि भगवान महावीर से करें तो उन्हें कान छेदने वाले ग्वाले का पशु के प्रति प्रेम दिखा, न कि उसकी क्रूरता। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम ने कैकेयी के षड्यंत्र के बावजूद वनवास जाने से पहले उनके चरणों का स्पर्श किया।

इसी प्रकार प्रतिदिन 6 पुरुष व 1 स्त्री की हत्या करने वाले अर्जुनमाली का सिद्ध-बुद्ध-मुक्त होना इस बात का प्रमाण है कि उसके भीतर अवश्य ही कुछ ऐसे गुण थे कि प्रतिदिन मानव वध करने वाला नरक का बंध न करते हुए मोक्ष के द्वार पहुँच गया।

अब प्रश्न उठता है कि गुणपरक दृष्टि आएगी कैसे?

(1) गुणीजन सत्संग - जैसी संगत वैसी रंगत। जैसे गुणी माता-पिता के क्रियाकलापों का संतान पर सकारात्मक एवं गुणात्मक प्रभाव पड़ता है, उसी प्रकार गुणीजनों की संगत से अच्छे प्रभाव पड़ते हैं।

(2) वर्णवाद - समुदाय के छोटे से छोटे सदस्य के छोटे से छोटे गुण की प्रशंसा करना वर्णवाद है। सेवामूर्ति मुनि नंदीषेण जैसे रत्न वर्णवाद का ही परिणाम है।

(3) अहोभाव - धन्यवाद, आभार, अनुमोदना आदि इसके अंतर्गत आते हैं। **'गुणीजनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड़ आवे, बने जहाँ तक इनकी सेवा...'** इन सबके अलावा गुणसंरक्षण पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। क्योंकि गुणमय दृष्टि उस पौधे के समान है, जिसके समुचित विकास हेतु संरक्षण व संवर्धन दोनों आवश्यक हैं।

अब यदि बात गुणमय दृष्टि के फायदे की करें तो ये व्यक्ति को दु:खी से सुखी बनाएगा। जिस प्रकार चश्मे का रंग किसी दृश्य के रंग को निर्धारित करता है, वैसे ही मनुष्य की दृष्टि मनुष्य का जीवन निर्धारित करती है। **21वीं सदी के इस दौर में मानव व्यथित है तो उसका एकमात्र कारण है मन की निरोगता पर ध्यान न दिया जाना।**

हमारे द्वारा दिया गया दान, स्वाध्याय, तप-त्याग, साधना सब व्यर्थ है, यदि हमारी दृष्टि गुणपरक नहीं है। अत: हम सभी का कर्तव्य है कि हम इस पर ध्यान दें, क्योंकि स्वस्थ मन से शरीर स्वस्थ होगा और स्वस्थ श्रावक से समाज।

शुद्ध दृष्टि गुण की राखिए, गुण धारिए दिल मांय।
गुणपरक दृष्टि सुखद, गुरु वाणी सुखदाय।।

श्रमणोपासक

भक्ति रस

गुरु राम

तर्ज : तू कितनी अच्छी है....

-देवेंद्र भंसाली, रायपुर

हु शि उ चौ श्री ज ग नाना ©

राम चमकते भानु समाना

मेरे श्वांसों में, मेरे नयनों में, मेरे मन बसता...
गुरु राम... गुरु राम... गुरु राम... गुरु राम...
गुरु गुण गाऊँ मैं, गुरु को पाऊँ मैं, गुरु सुख दाता हैं...
गुरु राम.... गुरु राम.... गुरु राम.... गुरु राम....

माँ गवरा का राजदुलारा,
नेमीचंद जी का कुल उजियारा,
लाखों भक्तों को है तारा, मुझको काहे बिसारा,
जग हितकारी हो, भव भयहारी हो, मंगलकारी हो।।1।।
गुरु राम.... गुरु राम.... गुरु राम.... गुरु राम....

अधरों पर इक नाम तुम्हारा,
करता तुम से विनती गुरुवर,
ज्ञान की रश्मि से अब भर दो, मेरे मन की गागर,
मंजिल मिल जाए, जीवन खिल जाए, मनवा गाता है।।2।।
गुरु राम.... गुरु राम.... गुरु राम.... गुरु राम....

हु शि उ चौ श्री ज ग नाना,
राम चमकते भानु समाना,
तव चरणों की छाँव तले ही मुक्तिनगर को पाना,
तू आनंद दाता है, तुम से ही नाता है, मन हर्षाता है।।3।।
गुरु राम.... गुरु राम.... गुरु राम.... गुरु राम....

श्रमणोपासक

समर्पण की झलक

-अनुपमा टड्डा

एक बार एक राजा के उद्यान में एक बहुत अद्भुत गुलाब का फूल खिला। बाग के बागवान ने जैसे ही उस फूल को देखा तो उससे कहा- ''हे मनमोहक फूल! तुम मेरे लिए ही खिले हो ना ताकि राजा तुम्हें देखकर खुश हो जाए और मुझे इनाम दे दे।'' फूल ने कहा- ''हाँ, बिलकुल मैं तुम्हारे लिए ही तो खिला हूँ। तुमने ही तो मुझे खाद, पानी देकर जन्म दिया है। मैं दिल से तुम्हारा आभारी हूँ।'' बागवान खुश होकर वहाँ से चला गया।

तभी तितली, भँवरा और मधुमक्खी वहाँ आए और बोले- ''अरे प्यारे फूल! तुम हमारे लिए ही तो खिले हो ना ताकि हम तुम्हारा पराग लेकर अपना और अपने बच्चों का पेट भर सकें।'' फूल ने कहा- ''बिलकुल, तुम ही तो हो जिनकी वजह से मुझ में यह पराग एकत्रित होता है। मेरा पराग तुम्हारे लिए ही है।'' तितली, भँवरे और मधुमक्खी ने पराग लिया और खुश होकर उड़ गए।

फिर वहाँ पर राजा आया। राजा ने खूबसूरत फूल को देखा तो कहा- ''ओ मेरे प्यारे फूल! तुम मेरे लिए ही खिले हो ना ताकि मैं तुम्हें अपनी रानी को देकर उसे खुश कर दूँ और उसका प्रेम पा सकूँ।'' फूल ने कहा- ''हाँ, राजन्! आपका राज उद्यान ही तो मेरी जन्मभूमि है। मैं आपके ऋण से कभी मुक्त नहीं हो सकता। मैं आपके लिए ही तो खिला हूँ।'' राजा बहुत खुश हुआ और उसने उस गुलाब के फूल को तोड़कर अपनी रानी को दे दिया। इतना खूबसूरत फूल देखकर रानी बहुत खुश हुई और उसने फूल से कहा- ''फूल! तुम मेरे लिए ही तो खिले हो ना ताकि मैं तुम्हें अपने बालों में सजाकर अपनी खूबसूरती बढ़ा सकूँ।'' फूल ने कहा- ''बिलकुल महारानी! मेरा यह सौम्य रूप आपके रूप को बढ़ाए इससे बढ़कर मेरा सौभाग्य और क्या होगा?'' रानी ने खुश होकर वह फूल अपने बालों में सजा लिया।

अगले दिन रानी ने वह फूल उतारकर फेंक दिया। दूसरा दिन हो जाने पर भी उस फूल की महक इतनी ज्यादा मनमोहक थी कि उधर से गुजरते हुए राजमहल के लिए इत्र बनाने वाले एक कर्मचारी की नासिका में पहुँच गई। उसने तुरंत ही उस फूल को उठाया और अपने साथ ले गया। अब उसने उस मुरझाए हुए फूल से कहा- ''हे फूल! तुम मेरे लिए ही खिले थे ना? ताकि मैं तुमसे इत्र बनाकर दुर्गंध को भी सुगंध में बदल सकूँ।'' फूल ने कहा- ''बिलकुल सही समझा आपने, मैं तो यूँ ही कचरे में गिरकर सड़ जाता। एक आप ही तो हो जो मरने के बाद भी मुझे सालों तक जीवित रख सकते हो।'' इत्र बनाने वाला बहुत खुश हुआ और उसने उस फूल से इत्र निकाल कर उसकी पंखुड़ियों को अपने मित्र को दे दिया।

उसका मित्र एक पान वाला था। उसने फिर फूल से कहा- ''सुनो फूल! तुम मेरे लिए ही खिले थे ना? ताकि मैं तुम्हारा स्वादिष्ट गुलकंद बनाकर सबके जीवन में मिठास घोल सकूँ।'' गुलाब ने कहा- ''बिलकुल सही समझा आपने। आप से बेहतर तो मुझे कोई जान ही नहीं पाया। आप ही की वजह से मैं किसी के जीवन में मिठास ला पाऊँगा।'' उस पान वाले ने खुश होकर उस गुलाब का गुलकंद बना दिया।

अब अगले दिन संयोगवश राज उद्यान में राजा, रानी सहित वे सारे लोग उपस्थित थे। उस दिन फिर

वहाँ पर वैसा ही एक अद्भुत मनमोहक गुलाब खिला हुआ था। पान वाला सबसे पहले पहुँचा और बोला– ''अरे, तुम आज फिर खिले हो, मेरे लिए! आहा!'' यह कहकर वह फूल को तोड़ने ही वाला था तभी इत्र वाला आया और बोला– ''यह गुलाब सिर्फ मेरे लिए खिलता है। खुद गुलाब ने मुझसे कहा है।'' वह जैसे ही गुलाब को छूने लगा वैसे ही रानी पहुँच गई और बोली– ''तुम्हारी हिम्मत भी कैसे हुई इस गुलाब को छूने की! यह गुलाब तो सिर्फ मेरे लिए खिलता है।'' तभी राजा भी आ गए और हँसते हुए बोले– ''अरे रानी साहिबा! तुम्हारे लिए गुलाब तो मैं लाया था, लेकिन यह खिलता मेरे लिए है।'' तभी वहाँ पर उड़ते हुए तितली, भँवरा और मधुमक्खी आए और कहने लगे– ''हे राजन्! होंगे आप अपने राज्य के राजा, मगर यह गुलाब प्रकृति की देन है और प्रकृति के राज में हम सभी एक बराबर हैं। इस गुलाब ने खुद हमसे कहा है कि यह हमारे लिए खिलता है।'' तभी बागवान आया और बोला– ''आप सब भूल रहे हो कि इस गुलाब का जन्मदाता मैं हूँ। यह गुलाब मेरी वजह से खिला है और यह हमेशा मेरे लिए ही खिलता है।''

अब सभी लोग एक-दूसरे से तर्क-वितर्क करने लगे। सबने बताया कि कैसे और क्यों गुलाब ने उनसे कहा था कि वह उनके लिए ही खिलता है। सबके तर्क में दम था, मगर कोई भी किसी नतीजे पर नहीं पहुँच रहा था। सबने तय किया कि गुलाब से ही पूछते हैं कि वह किसके लिए खिलता है। सब एक साथ गुलाब के पास आए और उससे पूछा– ''तुम ही बताओ कि तुम किसके लिए खिलते हो? कल तुमने हम सबसे यही कहा कि मैं तो सिर्फ आपके लिए ही खिलता हूँ। तुम तो प्रकृति की सबसे खूबसूरत देन हो। तुम झूठ कैसे कह सकते हो?''

गुलाब ने सबकी बातें सुनी और प्यार से मुस्कुराकर बोला– ''मैंने किसी से कुछ भी झूठ नहीं बोला। आप सभी का मुझ पर उपकार अवश्य ही रहा है, अत: मैंने आप सभी से ऐसा कहा था कि 'मैं आपके लिए ही खिला था'।''

माली ने मुझे पाला-पोसा, अत: उसका मुझ पर उपकार है। राजा के राज उद्यान में मुझे जन्म लेने के लिए स्थान मिला, अत: राजा का मुझ पर उपकार है। तितली, भँवरे व मधुमक्खी ने मेरा पराग एकत्रित करके उससे शहद जैसा उत्तम पदार्थ बना दिया, अत: उनका मुझ पर उपकार है। रानी ने मुझे अपने सिर के बालों पर बिठाकर मुझे कितना सम्मान दिया, अत: उनका मुझ पर उपकार है। इत्र बनाने वाले ने मेरी मुरझा चुकी पंखुड़ियों से इत्र बनाकर मेरी महक को बढ़ा दिया, अत: उसका भी मुझ पर उपकार है। और पान वाले ने मेरी सूखी पंखुड़ियों का गुलकंद बनाकर मुझमें मिठास घोल दी कि मैं सबके होठ-जीभ तक पहुँच गया।

अब आप सभी बताइए कि आप सभी का मुझ पर कितना उपकार है और उसी उपकार के प्रति कृतज्ञता समर्पणा व्यस्त करने के लिए मैंने आप सभी से कहा था कि ''मैं तो आपके लिए ही खिला था।''

यह सुनकर माली, राजा, रानी, तितली, भँवरा, मधुमक्खी, इत्रकार व पनवाड़ी सभी चकित हो गए। एक छोटा-सा फूल, लेकिन अपने उपकारियों के प्रति कितनी कृतज्ञता और समर्पणा का भाव!

माता-पिता, गुरु सहित अन्य कई लोगों का उपकार हम पर भी रहा हुआ है। सभी उपकारियों के प्रति हमारा समर्पणा का भाव, कृतज्ञता का भाव रहना ही चाहिए। एक छोटा-सा फूल, जिसने अपने सभी उपकारियों के प्रति समर्पणा का भाव व्यक्त कर दिया था।

जिस तरह फूल पर सर्वाधिक उपकार तो इत्र बनाने वाले का रहा था क्योंकि उसने मुरझा चुकी पंखुड़ियों से इत्र बनाकर फूल को सर्वश्रेष्ठ अवस्था प्रदान करके उसकी महक को बढ़ा दिया था, उसी तरह हमारे ऊपर भी आचार्य भगवन् के अनंत उपकार हैं। मिट्टी से मटका बनाने की कला कुंभकार की होती है, उसी तरह हमारी आत्मा को परमात्मा बनाने जैसी कला आचार्य भगवन् में है। हम भी सदा उनके उपकारों के प्रति कृतज्ञ बने रहें, उन चरणों में समर्पणा बनी रहे, ताकि उनकी कृपा से अजर-अमर-शाश्वत अवस्था को प्राप्त कर सकें।

श्रमणोपासक

आचार्य पद की महत्ता

-डॉ. आभाकिरण गाँधी, धागड़मऊ

आ - आचार पालन करने व कराने वाले
चा - चार गति का भ्रमण मिटाने वाले
र्य - यति धर्म के रक्षक
प - परम तत्त्व के बोधक
द - दया के दाता
की - कीर्ति हैं जिनकी चहुँओर
म - मन के ताप को
ह - हरने वाले
त्ता - तारण-तिरण के दाता

आचार्य पद की महत्ता अपने आप में गरिमापूर्ण है। आचार्य संघ के अनुशास्ता होते हैं। इन्हीं के नेतृत्व में चतुर्विध संघ अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता है। जीवन में पद का बड़ा महत्त्व है। जिस प्रकार वीणा में संगीत की संभावना है तो विसंगति की भी पूर्ण संभावना है। वीणा यदि कुशल हाथों में होगी तो गीत की धुन निकलेगी और यदि अकुशल हाथों में होगी तो शोरगुल होगा। मनुष्य अपने जीवन का कलाकार भी है और कला का उपकरण भी। जो अपने को जैसा बनाता है वैसा ही पाता है। जन्म से तो कोई अच्छा या बुरा पैदा नहीं होता। जन्म से तो सभी अनगढ़ पत्थर होते हैं, परंतु कला ही सभी को एक नया रूप देती है। उत्कृष्ट कला वही है जो आत्मा का कल्याण करती है। भारतीय ऋषि-मुनियों ने कहा है- **'सव्वकला धम्मकला जिणाई'** अर्थात् समस्त कलाओं में धर्मकला श्रेष्ठ है, क्योंकि वह जीवन जीने की कला सिखाती है और आत्मा के दर्शन कराती है। सबसे महान कलाकार वह है जो जीवन को ही कला का विषय बनाकर जीवन के सभी क्षणों को आनंदमय बनाता है। ऐसे ही आनंदमय पद की महत्ता है।

> *जिस व्यक्ति को जिंदगी में अपना लक्ष्य नजर आता है वह अपने जीवन की अंतिम साँस तक का उपयोग कर लेता है।*

आचार्यश्री स्वयं तो आनंद में मस्त रहते ही हैं साथ ही चतुर्विध संघ को भी आनंद के मार्ग पर ले जाते हैं। जिस आदमी को जिंदगी में अपना लक्ष्य नजर आता है वह अपने जीवन की अंतिम साँस तक का उपयोग कर लेता है। जिस आदमी के जीवन का कोई लक्ष्य नहीं होता वह आदमी न तो जी रहा है और न ही मर रहा है। उस आदमी की स्थिति बिलकुल ऐसी ही हो जाती है जैसे किसी आदमी को तरल ऑक्सीजन में गिरा दिया जाए। तरलता आदमी को जीने नहीं देती और ऑक्सीजन आदमी को मरने नहीं देती। ऐसी स्थिति जनसामान्य की है। इस स्थिति से उच्चत्तर स्थिति है आचार्य पद की। आचार्य सुगंध की भाँति सर्वत्र व्याप्त हैं, वे चाहे जितने गुणों की सौरभ अपने भीतर प्रकट कर सकते हैं।

महिमा है आपकी निराली,
पिलाते हो जिनवाणी की प्याली।
खिलती है सम्यक्त्व की फुलवारी,
होती है जीवन में खुशहाली।।

आचार्यश्री जी मानवता की मुंडेर पर मोहब्बत का जलता चिराग हैं, श्रमण संस्कृति के संवाहक व सच्चे दूत हैं, भविष्य के दिव्यद्रष्टा, शांति के सागर, गुणों के महासागर, अप्रमत्त योगी, साधना के मूर्तिमान प्रतीक, 36 गुणों से

सुशोभित हैं। आपश्री जी की महत्ता का गुणगान करने की शक्ति हमारी कलम में नहीं है। आप गुणातीत स्थिति में स्थापित हुए महापुरुष हैं। महापुरुषों का जीवन सूर्य व चंद्र की भाँति होता है, जो स्वयं प्रकाशित हैं तथा दूसरों को भी प्रकाशित करते हैं। आचार्यश्री जी की महत्ता को न इन स्थूल आँखों से देखा जा सकता है, न स्थूल जिह्वा से चखा जाता है और न ही स्थूल नासिका से सूँघा जा सकता है। उसे तो मात्र अनुभव किया जा सकता है। अनुभूति की यात्रा का शब्दों में शृंगार करना या अक्षरों में उतारना सहज नहीं है। सूक्ष्म तत्त्व को दुनिया नहीं जान सकती। दुनिया के लोग तो राग को समझ सकते हैं, पर महान विभूति की गहराई को नहीं जान पाते।

पानी है, पर प्यास नहीं तो क्या?
अवसर है, पर आस नहीं तो क्या?
पा सकता है इनसान हर मंजिल,
सब कुछ है, पर गुरुचरणों में समर्पण नहीं तो क्या?

फूलों के ढेर के पास सुगंध मिलेगी। गंदगी के ढेर के पास दुर्गंध मिलेगी। शोलों के पास गरमाहट मिलेगी। ओलों के पास ठंडक मिलेगी। इसी प्रकार महापुरुषों के पास ज्ञान मिलेगा। यदि पानी दूध के साथ मिल जाए तो वह दूध के भाव बिकेगा। जौहरी का ज्ञान ग्रहण करोगे तो जौहरी बनोगे। इत्र वाले का ज्ञान ग्रहण करोगे तो खुशबू हमारे मन-मस्तिष्क में ताजगी भर देगी। ऐसे ही आचार्यश्री के सान्निध्य में बैठोगे तो हमारी आत्मा में नवऊर्जा का संचार होगा।

नहीं है वो जिंदगी जिसे जहाँ नफरत से ठुकराए,
नहीं है वो जिंदगी जो मौत के कदमों पर झुक जाए।
जिंदगी तो वो है जो नाम पाती है भलाई में,
खुदी को छोड़कर जो पहुँच जाती है खुदाई में।।

आचार्य पद की महत्ता अनुपमेय है, विराट है, विशाल है।

श्रमणोपासक

आओ मनाएँ 'महत्तम महोत्सव'

हम सभी के आराध्य, नाना गुरु के राम, परमागम रहस्यज्ञाता, शास्त्रज्ञ, तरुण तपस्वी, प्रशांतमना आचार्य श्री रामलाल जी म.सा. का 50वाँ (स्वर्ण) दीक्षा दिवस माघ सुदी 12 संवत् 2081, दिनांक 09 फरवरी 2025 को है। इस पावन अवसर के स्वागत हेतु संघ द्वारा आचार्य श्री रामेश सुवर्ण दीक्षा महामहोत्सव 'महत्तम महोत्सव' आयाम के रूप में मनाने का निर्णय लिया गया, जिसका शुभारंभ 13 जुलाई 2022 को हुआ। इस आयाम के नौ बिंदुओं के अन्तर्गत लगभग प्रत्येक साधुमार्गी परिवार के सदस्य धर्माराधना एवं ज्ञानार्जन से अपना जीवन धन्य बना रहे हैं।

इस पावन अवसर के उपलक्ष्य में हमारा यह प्रयास है कि श्रमणोपासक के आगामी अंक आचार्य श्री रामेश के जीवन पर आधारित हों, जिनमें उनकी दीर्घ कठोर संयम साधना, चारित्र, दीक्षाओं के प्रसंग, संघ एवं समाज के उत्थान के लिए उनके द्वारा किए गए अनमोल प्रयास, जन-मन को पावन करते उनके मार्गदर्शन आदि से संबंधित सामग्री समाहित करने का प्रयास रहेगा। ऐसे किसी विशेष प्रसंग की जानकारी या कोई संस्मरण आपके पास हो तो शीघ्र ही साफ अक्षरों में लिखकर श्रमणोपासक टीम को भिजवाने का कष्ट करें ताकि वह सामग्री आगामी अंकों में प्रकाशित कर उसे संघ व समाज हित में सभी से साझा किया जा सके।

आप अपनी रचनाएँ वॉट्सएप 9314055390 व email : news@sadhumargi.com के माध्यम से भेज सकते हैं।

-सह-सम्पादिका

जहाँ-जहाँ पड़े महापुरुषों के चरण।
संयम से खिल उठा रज का कण-कण।।

22 जनवरी को जावद में नौ दीक्षाएँ एवं 17 फरवरी को निम्बाहेड़ा में दो दीक्षाएँ होनी संभावित

05 फरवरी के लिए मुमुक्षु सुश्री मोक्षा जी भंडारी एवं 09 जून के लिए दो भागवती दीक्षाएँ घोषित

मुमुक्षु सुरेश जी पामेचा का अनुज्ञा-पत्र गुरुचरणों में समर्पित

पिपलियामंडी में चातुर्मास जैसा ठाठ

समता भवन, पिपलियामंडी, बरखेड़ा पंथ, मल्हारगढ़, मूंडली, चल्दू, आर.बी.एस. कॉलेज, भाटखेड़ा।

राम शब्द में जीवन का सार है, जिनको पूजता सारा संसार है।
नवम् पाट पर विराजे, संयम पथ के दातार हैं।।

राग से वीतराग पथ की ओर बढ़ने की प्रेरणा निरंतर सबको देने वाले युगनिर्माता, युगपुरुष, साधना के शिखर पुरुष, ज्ञान और क्रिया के बेजोड़ संगम, उत्क्रांति प्रदाता, नानेश पट्टधर आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा., बहुश्रुत, वाचनाचार्य उपाध्याय प्रवर श्रद्धेय श्री राजेश मुनि जी म.सा. आदि ठाणा मालवा के विभिन्न क्षेत्रों में अध्यात्म से जन-जन को सराबोर कर रहे हैं। पिपलियामंडी में चातुर्मास जैसा ठाठ लगा हुआ है। निर्मल, उत्कृष्ट संयम साधना से आकर्षित होकर अनेक भव्यात्माएँ श्रीचरणों में सर्वतोभावेन समर्पित होने के लिए लालायित हैं। इसी कड़ी में परम गुरुभक्त 71 वर्षीय मुमुक्षु सुरेश जी पामेचा, पिपलियामंडी एवं 20 वर्षीय मुमुक्षु मोक्षा जी भंडारी, रतलाम की जैन भागवती दीक्षा हेतु परिजनों ने अनुज्ञा-पत्र गुरुचरणों में समर्पित किए। मुमुक्षु मोक्षा जी भंडारी की दीक्षा 05 फरवरी के लिए घोषित होने के साथ ही संपूर्ण मालवा क्षेत्र एवं देशभर में हर्ष की लहर व्याप्त हो गई। ज्ञान-ध्यान की प्रेरणा एवं व्यसनमुक्ति व संस्कार जागरण कार्यक्रम ग्रामीणों व स्कूलों के मध्य निरंतर हो रहे हैं। कार्यक्रम को अच्छा प्रतिसाद मिल रहा है।

बहुश्रुत, वाचनाचार्य उपाध्याय प्रवर श्रद्धेय श्री राजेश मुनि जी म.सा. आदि ठाणा-3 पिपलियामंडी के पश्चात् नारायणगढ़, झारड़ा, बूढ़ा, आंतरीमाता, बोरदिया कलां, महागढ़, मनासा, संजीत, दोबड़ा आदि अनेक क्षेत्रों में अभूतपूर्व धर्म जागरणा कर रहे हैं। ज्ञान-ध्यान व तप-त्याग की अपूर्व छटा देखने को मिल रही है। उपाध्याय प्रवर शास्त्र एवं सत्साहित्य अध्ययन करने, दीक्षा लेने वाले को अन्तराय नहीं देने, वर्षभर में खाने के द्रव्य सीमित करने, संसार को छोड़कर संयम भाव जगाने, बाल-युवा पीढ़ी को संस्कारित करने आदि अनेक प्रेरणाओं से जन मन में भाव-भक्ति का संचार कर रहे हैं।

शासन दीपक श्री नीरज मुनि जी म.सा. आदि ठाणा-3 के पावन सान्निध्य में पिपलियामंडी में परिज्ञा शिविर एवं लक्ष्य सिद्धि शिविर के साथ धर्माराधना का ठाठ लगा हुआ है। महासतियाँ जी द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में शासन प्रभावना निरंतर जारी है।

सरल, सत्य व्यवहार जैनत्व की पहचान - आचार्य श्री रामेश
जीवन का सच्चा सुख संयम में है - उपाध्याय प्रवर

धर्म से तृप्ति की प्राप्ति

16 दिसंबर, 2023, समता भवन-पिपलियामंडी। 'हे प्रभु पंच परमेष्ठी दयाला' भक्ति भजन के साथ प्रात: मंगलमय प्रार्थना हुई। विशाल धर्मसभा को संबोधित करते हुए मानवता के मसीहा आचार्य भगवन् ने अपनी दिव्यदेशना में फरमाया कि *''धर्म शक्ति महान है। संसार के वैभव सुख से तृप्ति मिलने वाली नहीं है। हमारी लालसा, इच्छाओं का कोई पार नहीं है। हमें कितना भी मिल जाए, पर तृप्ति मिलने वाली नहीं है। धर्म की आराधना में तृप्ति मिलने वाली है। मेरी प्यास बुझने वाली है, अब मुझे और नहीं चाहिए। नीति एवं नैतिकता से चलेंगे तो जीवन में स्थिरता आएगी। तन जाए तो जाए, पर सत्य धर्म नहीं जाना चाहिए। बिस्किट या अन्य वस्तुओं से धर्म की प्रभावना नहीं होगी। धर्म जीवन में प्रतिष्ठित होना चाहिए। धर्म तत्त्व जीवन में है तो तृप्ति रहती है। धन का संग्रह नहीं, विनिमय करें। आकांक्षाओं से दूर रहेंगे तो तृप्ति आ जाएगी। नैतिकता की जीवन की सर्वप्रथम आवश्यकता है।''*

श्री हर्षित मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि संसार छोड़ने का साहस करें। एक दिन वैसे ही छोड़कर जाना है। उससे पहले हम अपने समय को सार्थक करें।

साध्वी श्री प्रियलक्षणा श्री जी म.सा., साध्वी श्री अरुणा श्री जी म.सा., साध्वी श्री मंगला श्री जी म.सा., साध्वी श्री विरल श्री जी म.सा., साध्वी श्री प्रांजल श्री जी म.सा., साध्वी श्री उपासना श्री जी म.सा. आदि साध्वी मंडल ने गुरुभक्ति गीत प्रस्तुत किया।

शासन दीपिका साध्वी श्री प्रियलक्षणा श्री जी म.सा. ने 'जग गए भाग्य हमारे, गुरु राम है तारणहारे' गीत के साथ फरमाया कि गुरु का वचन वरदान होता है। हमारे जीवन में लघुता और सरलता आ जाए कि जो गुरु कहें वो ही करना है।

स्थानीय संघ अध्यक्ष जी एवं अन्य वक्ताओं ने गुरुवर के सान्निध्य का अधिकाधिक लाभ उठाने की अपील की। सामूहिक दया भाव एवं 10 प्रत्याख्यान सहित अनेक त्याग-प्रत्याख्यान हुए। श्री साधुमार्गी जैन संघ, कपासन ने आचार्य भगवन् के आगामी होली चातुर्मास, वर्षावास, अक्षय तृतीया एवं दीक्षा सहित अन्य प्रसंगों हेतु विनती गुरुचरणों में प्रस्तुत की। दोपहर में आचार्य भगवन् के सान्निध्य में ज्ञानचर्चा, प्रश्नोत्तरी आदि धार्मिक कार्यक्रम हुए। सायंकालीन प्रतिक्रमण एवं संवर में श्रावकों की अच्छी उपस्थिति रही।

साध्वी श्री जयश्री जी म.सा. के संथारापूर्वक पंडितमरण के पश्चात् उनके सांसारिक परिजन कन्हैयालाल जी, रतनलाल जी, बसंतराज जी रांका परिवार, चेन्नई/बेंगलुरु ने गुरुचरणों में उपस्थित होकर आध्यात्मिक शांति एवं संदेश प्राप्त किया।

मध्य प्रदेश शासन के पूर्व मंत्री एवं नवनिर्वाचित विधायक ओमप्रकाश जी सकलेचा, जावद ने गुरुदर्शन-सेवा का लाभ लेकर विभिन्न विषयों पर चर्चा कर मार्गदर्शन प्राप्त किया।

पापकर्म के सेवन से आत्मा भारी होती हैं

17 दिसंबर 2023। प्रात: रविवारीय समता शाखा में समता आराधना हेतु श्रद्धालु भाई-बहिन अच्छी संख्या में उपस्थित थे। आचार्य भगवन् ने आशीर्वाद स्वरूप मांगलिक फरमाई।

समता भवन में आयोजित विशाल धर्मसभा में उपस्थित गुरुभक्तों की मनरूपी धरा को पावन करते हुए प्रशान्तमना आचार्यदेव ने पावन वाणी में फरमाया कि *''हमारी अनंत पुण्यवानी है कि हमें जिनशासन मिला है, जिनेश्वर देव की वाणी मिली है, पर जो चाहिए वह सार निकाल नहीं पा रहे हैं। जिनवाणी में हीरा, मोती, माणक, पन्ना आदि भरे पड़े हैं। अलमारी में शास्त्र सजे मिलेंगे, पर पढ़ने की फुरसत नहीं है। भगवान की वाणी दु:ख दूर करने वाली है। आज धन कमाने में जितनी रुचि है उतनी रुचि शास्त्र पढ़ने में नहीं है। शास्त्र पढ़ने से अनमोल रत्न प्राप्त होंगे। शास्त्र मनोयोग से पढ़ने चाहिए। धार्मिक क्रियाएँ आत्महित के लिए करनी चाहिए। आत्महित से संतोष, साधुत्व मिलता है। 18 पापों से दूर होने से हमारी आत्मा हलकी होती है। हमारा जीवन शांत, सरल, पापरहित होगा तो विश्व में शांति आ जाएगी, तभी जिनशासन की प्रभावना होगी। हम शरीर व आत्मा को कितनी खुराक दे रहे हैं, आत्मचिंतन करें। प्रात: उठते ही यह भावना भाएँ कि आज मैं खुश रहूँगा, प्रसन्न रहूँगा।''*

श्री हर्षित मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि चतुर्विध संघ के कल्याण, विकास व प्रभावना के लिए हमारा सतत प्रयास होना चाहिए। जिनशासन जयवंत बने, उसमें हमारा योगदान हो।

साध्वी श्री वीतराग श्री जी म.सा. ने हिंदी के 52 अक्षरों से आचार्य श्री रामेश के 52 गुणों का हृदयस्पर्शी वर्णन सभा में प्रस्तुत करते हुए फरमाया कि महापुरुष गुणों के भंडार हैं। एक गुण भी हमारे जीवन में आ जाए तो जीवन सफल हो जाए।

शासन दीपिका साध्वी श्री प्रियलक्षणा श्री जी म.सा., साध्वी श्री अरुणा श्री जी म.सा. आदि साध्वीवर्याओं ने *'राम गुरु सारे जग में यूँ छा गए'* गुरुभक्ति गीत प्रस्तुत किया।

सभा में उपस्थित सभी लोगों ने आचार्य भगवन् की अनुपम देन समता सर्वमंगल आयाम को अपने-अपने प्रतिष्ठान में लागू करने का संकल्प लिया। आचार्य भगवन् के वर्ष 2024 के चातुर्मास हेतु जावरा, नोखा, प्रतापगढ़ संघ ने पुरजोर विनती गुरुचरणों में समर्पित की एवं कुकड़ेश्वर, निकुम्भ, जावद, रतलाम, बड़ावदा, रामपुरा, मोरवन, दलौदा आदि अनेक क्षेत्रों ने क्षेत्र स्पर्शने की विनती प्रस्तुत की।

परम गुरुभक्त लोकेश जी नाहर, नागदा के निधन पर परिजनों ने गुरुचरणों में आध्यात्मिक शांति व संदेश प्राप्त किया। स्वीडन से पधारे भ्रमण दल ने आचार्य भगवन् के पावन दर्शन कर जीवन धन्य किया। उन्हें जब जैन धर्म, साधुचर्या, गुरुवर के संदेश एवं व्यसनमुक्ति आदि विभिन्न आयामों की जानकारी दी गई तो वे आश्चर्यचकित हो गए। ऐसा आदर्श त्यागमय जीवन देखकर नतमस्तक हो विभिन्न शुभ संकल्प लिए। पचरंगी के साथ विभिन्न त्याग-प्रत्याख्यान हुए। आचार्यदेव के सान्निध्य में आगम वाचनी, प्रश्नोत्तरी, ज्ञानचर्चा, जिज्ञासा समाधान आदि कार्यक्रम हुए।

सत्य मार्ग पर चलने वाला निर्भय बना रहता हैं

18 दिसंबर 2023। मंगलमय प्रार्थना में पंच परमेष्ठी का गुणानुवाद करने के पश्चात् आयोजित धर्मसभा में शास्त्रज्ञ आचार्य भगवन् ने अपनी दिव्यदेशना में उपस्थित गुरुभक्तों को संबोधित करते हुए फरमाया कि

आचार्य भगवन् के आह्वान पर खाना बनाने के स्थान पर एवं खाना खाने के स्थान पर क्रोध नहीं करने का संकल्प कई लोगों ने लिया।

''सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह आदि गुण अजेय हैं। इन्हें कोई जीत नहीं सकता। सत्यमेव जयते के अनुसार हमारा जीवन नहीं है। राजा हरिश्चन्द्र को कोई भय नहीं था। कोई सोचे कि झूठ से चलूँ तो उसे सदा भय बना रहता है। झूठ से चलने वाला हमेशा यही सोचता है कि अपने जीवन को देखता हूँ तो स्वयं को हारा हुआ महसूस करता हूँ। हम सदा ही झूठ, हिंसा, परिग्रह से हारे हैं। 'कितने भी संकट आ जाएँ, सत्य से पीछे नहीं हटूँगा' यह दृढ़ संकल्प करना जरूरी है। अवगुण हम पर भारी पड़ रहे हैं, क्योंकि हमने उन्हें पनाह दे रखी है। क्रोध को कैसे जीता जाए? बिना कारण ही गुस्सा आ जाता है। हमने हमारे मन को खुला छोड़ रखा है। संवर का मतलब केवल सोना नहीं है अपितु आश्रवों को छोड़ना है। कोई कितनी ही गालियाँ दे, मैं क्रोध नहीं करूँगा। भोजन में थोड़ी ऊँच-नीच होते ही थाली फेंककर तुरंत बोल उठते हैं कि ढंग से खाना बनाना आता नहीं है। खाना बनाने वालों को जितना कहते हैं उतना ही उनका मन बिखरता है। वहाँ शांत भी रहा जा सकता है। मरने से पहले साधु बनना जरूरी है। भगवान ने कहा है कि जो मेरेपन का त्याग कर सकता है वही सुखी है। आज स्थिति ठीक इसके विपरीत है कि 'जो मेरा है सो मेरा है और जो तेरा है सो भी मेरा ही है'। तृष्णा का कोई अंत नहीं है।'' आचार्य भगवन् के आह्वान पर खाना बनाने के स्थान पर एवं खाना खाने के स्थान पर क्रोध नहीं करने का संकल्प कई लोगों ने लिया।

श्री हर्षित मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि हमारे संकल्प में शक्ति होती है। हम जैसा बनना चाहें बन सकते हैं। शासन दीपिका साध्वी श्री प्रियलक्षणा श्री जी म.सा., साध्वी श्री अरुणा श्री जी म.सा. आदि साध्वीवृंद ने गुरुभक्ति गीत प्रस्तुत किया। समता महिला मंडल, मंदसौर ने मंदसौर पधारने की विनती गुरुचरणों में प्रस्तुत की। एक घंटे मौन रहने का संकल्प कई लोगों ने लिया।

मंदसौर से गांधी हर्बल होते हुए बहुश्रुत, वाचनाचार्य उपाध्याय प्रवर श्री राजेश मुनि जी म.सा. आदि ठाणा-3 का जय-जयकारों के साथ पिपलियामंडी में गुरुचरणों में पधारना हुआ। युवा टीम ने सर्वमंगल आयाम को हर प्रतिष्ठान में प्रारंभ करने के लिए भागीरथी प्रयास किया। दोपहर में आचार्य भगवन् के पावन सान्निध्य में आगम वाचनी, ज्ञानचर्चा, प्रश्नोत्तरी आदि हुए।

आगार से अणगार बनें

19 दिसंबर 2023। प्रात:कालीन मंगलमय प्रार्थना में *'नवकार मंत्र है महामंत्र, इस मंत्र की महिमा भारी है'* का भावभरा गायन हुआ। प्रवचन सभा में तरुण तपस्वी आचार्य भगवन् ने अपनी पावन देशना में जन-जन के मन को आत्मतृप्त करते हुए फरमाया कि *''समझदार व्यक्ति वही प्रवृत्ति करेगा, जिसके पीछे कोई प्रयोजन होगा। आप सामायिक कर रहे हैं, प्रवचन सुन रहे हैं, इसके पीछे क्या प्रयोजन है? सुधर्मा स्वामी के आगमन पर जम्बूकुमार व्याख्यान सुनने पहुँचे। सुनने के लिए आने वालों एवं रुटिन में आने वालों में क्या अंतर है? सुनने वाला दिल खोलकर आता है कि मेरे दिल में कुछ आए। जम्बूकुमार सुनने के भाव से आए और दिल के दरवाजे खोल दिए। मेघकुमार को सुनने की तमन्ना थी। भगवान की वाणी सुनते हुए, पीते चले गए। भगवान महावीर को सुनने हजारों-लाखों श्रोता आते थे। सुनने की जिज्ञासा से बहुत कम लोग आते थे। सुनने की जिज्ञासा का मतलब है कुछ*

धारण करने का भाव। आनंद श्रावक भी पहली बार भगवान महावीर की वाणी सुनने के लिए गए। फिर भी वे सच्चे व्यापारी, सच्चे ग्राहक निकले। उन्होंने विचार किया कि खाली हाथ क्यों जाऊँ। हम भी सुनने के साथ ही भगवान की वाणी को जीवन में धारण करें। आगार से अणगार धर्म स्वीकार करें। महाव्रत नहीं तो अणुव्रत ही स्वीकार करें। जिसको जीवन में सुख की चाह है, वह भगवान की वाणी को स्वीकार करे।''

भाई-भाई के बँटवारे के मामले कोर्ट-कचहरी में मिलेंगे, जबकि उन मामलों को घर पर बैठकर निपटाया जा सकता है।

श्री राजन मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि हम सदैव श्रेष्ठता की ओर कदम बढ़ाएँ और उच्च विचार, श्रेष्ठ आचरण से जीवन बगिया को महकाएँ। शासन दीपिका साध्वी श्री प्रियलक्षणा श्री जी म.सा., साध्वी श्री अरुणा श्री जी म.सा. आदि साध्वी मंडल ने गुरुभक्ति गीत प्रस्तुत किया।

दीक्षा दान देकर भगवान महावीर के मार्ग का अनुसरण प्रदान करने वाले परम श्रद्धेय आचार्य भगवन् ने अद्भुत कृपा कर 22 वर्षीय **मुमुक्षु रिया जी डागा** सुपुत्री श्री लालचंद जी मधुदेवी डागा, कोलकाता/बीकानेर की जैन भागवती दीक्षा **22 जनवरी** को **जावद** के लिए उद्घोषित की। इसी के साथ ही संपूर्ण सभा जयघोषों से गूँज उठी। हर्ष-हर्ष, जय-जय की ध्वनि से हर्षातिरेक के भाव व्यक्त हो रहे थे।

पिपलियामंडी एवं दुबई के दाऊदी बोहरा समाज के अजीज भाई, समीर भाई, तुराब भाई, असगर भाई, फकरूद्दीन भाई आदि ने आचार्य भगवन् एवं उपाध्याय प्रवर के पावन दर्शन, वंदन कर विभिन्न विषयों पर चर्चा की। समता सर्वमंगल को अपने प्रतिष्ठानों में प्रारंभ करने का संकल्प कई लोगों ने लिया। 7 वर्षीय बालक गर्वित सेठिया, गंगाशहर ने कायाक्लेश तप में लोच करवाकर कर्मनिर्जरा का लाभ लिया। दोपहर में द्वय महापुरुषों के पावन सान्निध्य में आगम वाचनी, ज्ञानचर्चा एवं जिज्ञासा समाधान आदि कार्यक्रम हुए।

पुत्र, सुपुत्र हो या कुपुत्र धन संचय की आवश्यकता नहीं

20 दिसंबर 2023। भोर के प्रस्फुटन के साथ ही मंगलमय प्रार्थना में देव-गुरु-धर्म को समर्पित भाव व्यक्त किए गए। विशाल धर्मसभा को संबोधित करते हुए विश्ववंदनीय आचार्य भगवन् ने अपनी अमृतवाणी में फरमाया कि *''देव-गुरु-धर्म तत्त्व ये तीन महान हैं। इन्हें जो पहचाने वह सच्चा बुद्धिमान है। नवकार महामंत्र हमारे गणधरों की देन है। उस पर हमारा भरोसा नहीं है। अन्य मंत्रों के पीछे भागते रहते हैं। जो सहज में मिल जाता है उसकी कीमत करना नहीं जानते। बाप की संपत्ति मिल जाए तो बेटे को उसके लिए की गई मेहनत का मूल्यांकन नहीं होता। वह उस संपत्ति की कदर नहीं कर पाता। जिसने मेहनत की है वही कदर जानता है। मेहनत करने वालों की हार नहीं होती है। तुम्हारा बेटा यदि सपूत है तो उसके लिए धन संचय करने की आवश्यकता नहीं है। वह बुद्धि बल से धन कमा लेगा और यदि कपूत है तो जितनी भी संपत्ति होगी वह उड़ा देगा। संतान जब तक अपने पैरों पर खड़ी नहीं होती तब तक बाप की संपत्ति पर जीती है। जब अपने बुद्धि शौर्य से अर्थोपार्जन करती है तो फिर बाप की संपत्ति पर नहीं जीती है। जो बाप की संपत्ति पर नजर गड़ाता है वह पराई स्त्री पर नजर गड़ाता है। बात कड़वी जरूर लगेगी, लेकिन सत्य है। भाई-भाई के बँटवारे के मामले कोर्ट-कचहरी में मिलेंगे, जबकि उन मामलों को घर पर बैठकर निपटाया जा सकता है।''*

श्री राजन मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि हमारी दृष्टि सदैव गुणग्राहक होनी चाहिए। हमें लोगों की बुराई नहीं अच्छाई देखनी है। अच्छाई देखने से हम भी एक दिन गुणों की खान बन जाएँगे।

शासन दीपिका साध्वी श्री प्रियलक्षणा श्री जी म.सा., साध्वी श्री अरुणा श्री जी म.सा. ने 'राम गुरुवर सबसे निराले' गुरुभक्ति गीत प्रस्तुत किया। शासन दीपिका साध्वी श्री सुशीलाकँवर जी म.सा. आदि ठाणा एवं शासन दीपिका साध्वी श्री मनोरमा श्री जी म.सा. आदि ठाणा क्रमशः दलौदा एवं मनावर का चातुर्मास पूर्ण कर विभिन्न क्षेत्रों में शासन की प्रभावना करते हुए गुरुचरणों में उपस्थित हुए।

'राम गुरु का है संदेश, व्यसनमुक्त हो सारा देश' अभियान के तहत विभिन्न स्कूलों में नैतिक शिक्षा एवं व्यसनमुक्ति के कार्यक्रम संपन्न हुए। जावद, नारायणगढ़, संजीत, मंदसौर, दलौदा, रतलाम, जावरा, झारड़ा, बड़ावदा आदि अनेक स्थानों के श्रद्धालुओं ने क्षेत्र स्पर्शने की विनती गुरुचरणों में प्रस्तुत की। पचरंगी तप के अंतर्गत भाई-बहिन उत्साहपूर्वक तप की आराधना में लगे हुए हैं। दर्शनार्थियों का ताँता लगा रहा। श्री साधुमार्गी जैन संघ, महिला समिति, बहू मंडल एवं समता युवा संघ, पिपलियामंडी की धर्मनिष्ठा व सेवाभक्ति सराहनीय रही।

सिद्धों का सुख अनंत है

मुमुक्षु सुरेश जी पामेचा का अनुज्ञा-पत्र गुरुचरणों में समर्पित

21 दिसंबर 2023। प्रातः की मंगल बेला में प्रभु एवं गुरुभक्ति से ओत-प्रोत प्रार्थना के पश्चात् चतुर्विध संघ की उपस्थिति में आयोजित प्रवचन सभा में धर्म का तलस्पर्शी ज्ञान प्रदान करते हुए सिरीवाल प्रतिबोधक आचार्य भगवन् ने अपनी दिव्यवाणी में फरमाया कि *''सिद्धों का सुख अनंत है। हम नहीं जान सकते कि उनका सुख कैसा है। देवताओं का सुख भी हमारा अतीत है। संसार के सारे प्राणियों, देवों, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, शालिभद्र, धन्ना जी इन सबके सुखों को एक साथ मिला लिया जाए और उस सुखों को उतने ही सुखों से गुणा करने पर जितना सुख प्राप्त होगा उससे भी अनंत गुणा सुख एक-एक सिद्ध भगवान का कहा है। भगवान की महिमा लोक में सूर्य से भी अधिक है। सूर्य के प्रकाश से भी आपके ज्ञान का प्रकाश अनंत गुणा है। क्योंकि केवलज्ञान से संपूर्ण लोक को देखा जाता है। केवलज्ञान का प्रकाश अनंत गुणा है। वैसे ही छद्मस्थ का जो सुख इन्द्रियजनित है, वो सुख कुछ भी नहीं है। इन्द्रियों के वशीभूत होकर देखने वाला जीव केवल भ्रम में जीने वाला होता है। वह सच्चाई में नहीं जी रहा है। धन-दौलत, परिवार को आप अपना मान रहे हो, किंतु हकीकत में क्या वे आपके हैं? मनुष्य जन्म प्राप्ति के बाद हम क्या लाभ उठा रहे हैं? जब तक मोक्ष का रास्ता नहीं पकड़ा तब तक जितने भी जन्म लिए वे सारे के सारे व्यर्थ गए। सिद्धों का सुख कभी लुप्त होने वाला नहीं है। उस सुख की दौड़ में हम दौड़ेंगे तो वह सुख हमें भी प्राप्त हो सकता है। सुरेश जी पामेचा के समान हम भी अपने संयम भावों को जागृत करें।''*

श्री राजन मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि हमारा जीवन कुछ करने के लिए है। हमें अपने भीतर रहे हुए सुप्त सिंह को जगाना चाहिए। सुखी बनने के लिए संसार को छोड़ना पड़ता है। खाली संसार को छोड़ने से सुख नहीं होंगे। मन में रहे हुए संसार को छोड़ने से सुखी होंगे।

साध्वी श्री सुविराग श्री जी म.सा. ने फरमाया कि गुरु-भगवंतों का सान्निध्य और कृपा का मिलना बहुत पुण्यवानी का फल है।

परम गुरुभक्त **मुमुक्षु भाई श्री सुरेश जी पामेचा, पिपलियामंडी** ने प्रतिज्ञा-पत्र का पठन किया। मुक्ता जी चौधरी ने परिजनों की ओर से अनुज्ञा-पत्र का पठन किया। जैसे ही धर्मनिष्ठ पामेचा परिवार ने गुरुचरणों में अनुज्ञा-पत्र समर्पित किया जयवंता-जयवंता की ध्वनि जन-जन के मुख से उच्चरित हो उठी। स्थानीय पामेचा एवं अन्य परिवारों से पूर्व में 18 दीक्षाएँ नानेश-रामेश शासन में हो चुकी हैं। संघ अध्यक्ष जी ने इस अवसर को स्वर्णिम पल निरूपित

किया। त्याग-तपस्या के अनेक प्रत्याख्यान हुए।

शक्ति का बिखराव न हो

22 दिसंबर 2023। मंगल बेला में प्रात:कालीन प्रार्थना से आत्मभावों को शुद्ध करने के पश्चात् दयानिधान कृपानिधि आचार्य भगवन् ने उपस्थित जनसमूह को अपनी अमृतवाणी से पावन करते हुए दिव्यदेशना में फरमाया कि *''दुनिया में असंभव नाम की कोई चीज नहीं है। यदि कुछ असंभव लग रहा है तो वो है हमारा मन। इसे भी साधना असंभव नहीं है, किन्तु हमने मान लिया है कि असंभव है। इसके लिए अभय, अद्वेष और अखेद इन तीन बातों को जीवन में उतार लें। भय रहित होना अभय है। द्वेष रहित होना अद्वेष है। खेद रहित होना अखेद है। ये तीन अवस्थाएँ यदि हमारे भीतर आ जाती हैं तो फिर हमें मुक्ति की डिग्री प्राप्त होने में देर नहीं लगेगी। हम अपनी शक्ति का बिखराव कर लेते हैं। फिर वह बिखरती हुई शक्ति जिस उद्देश्य को साधना चाहते हैं उसे साध नहीं पाती। हमारा लक्ष्य व उद्देश्य एक होना चाहिए और पूरी शक्ति उसी में नियोजित कर देनी चाहिए। मेरा जो लक्ष्य है वही मेरी दृष्टि है, वही मेरी प्रवृत्ति है। एक दृष्टि रखते हुए चलें, लेकिन हमारा मन चंचल हो जाता है। जिस उत्साह-उमंग से जिस लक्ष्य को लेकर चलें, उसमें अंतर नहीं आना चाहिए। सदा उस लक्ष्य को बरकरार रखना चाहिए। प्रतिकूलता भी हमारे मन को आहत करने वाली नहीं होनी चाहिए। प्रतिकूलताएँ हमें प्रेरित करने वाली होनी चाहिए।''*

श्री हर्षित मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि सुख स्थिरता में है। जितने स्थिर होंगे उतने ही सुखी होंगे। जहाँ मन अस्थिर होता है उस विषय को पहचानें और उसमें संयमित होने का लक्ष्य रखें। स्थिरता बढ़ेगी तो धीरे-धीरे चित्त की समाधि प्राप्त होगी। जब तक संकल्प नहीं लेंगे तब तक मन दु:खी होगा।

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से धर्माराधना

23 दिसंबर 2023। प्रात:कालीन मंगलमय प्रार्थना से दिन के शुभारंभ पश्चात् धर्मसभा में परमागम रहस्यज्ञाता आचार्य भगवन् ने विशाल जनमेदिनी को संबोधित करते हुए फरमाया कि *''धर्म की आराधना व साधना द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव इन चार बिंदुओं के आधार पर होती है। हमारे उपकरण, वस्त्र आदि शुद्ध होने चाहिए। जिस स्थान पर धर्म आराधना की जा रही है, वहाँ उपद्रव आदि न हो। भाव, भावना में विशुद्धि होनी चाहिए। ये चार प्रकार की अवस्थाएँ यदि सही ढंग से बैठती हैं तो धर्म की आराधना सम्यक् प्रकार से होती है। द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव इन चारों की शुद्धिपूर्वक आराधना करने से हमें विशेष आनंद की पूर्ति होगी और यदि कहीं भी अतिक्रमण होगा तो मन विचलित हो जाएगा।''*

श्री हर्षित मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि स्थिरता ही अपने आप में सुख है। चंचलता या गति हमें जितना भीतर पहुँचाते हैं उससे कई गुणा स्थिरता हमें हमारे भीतर पहुँचाती है। स्थिरता के बिना सुख, साधना व सिद्धि नहीं है।

श्री निर्वाण मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि जब व्यक्ति को धर्म पर श्रद्धा होती है तब वह सम्यग्दृष्टि बन जाता है। हमें संसार छोड़ने का प्रयास करना है। जितनी ज्यादा सुविधाओं में जीएँगे उतने ही दु:खी होंगे। साध्वी मंडल ने गुरुभक्ति गीत प्रस्तुत किया। संघ अध्यक्ष जी सहित अनेक भाई-बहिनों ने गुरु की महिमा का बखान किया। मंदसौर, रामपुरा, संजीत आदि अनेक स्थानों के श्रद्धालुओं ने क्षेत्र स्पर्शने की विनती श्रीचरणों में प्रस्तुत की।

शासन दीपक श्री नीरज मुनि जी म.सा. एवं श्री निर्वाण मुनि जी म.सा. का विभिन्न क्षेत्रों में जिनशासन की प्रभावना करते हुए गुरुचरणों में पधारना हुआ।

निर्भयता में ही भक्ति संभव

24 दिसंबर 2023। प्रात: मंगलमय प्रार्थना से दिन के शुभारंभ पश्चात् आयोजित प्रवचन सभा में जन-मन अनुशासक, दृढ़ संयमी आचार्य भगवन् ने उपस्थित जनमेदिनी को पावन करते हुए अपनी दिव्यदेशना में फरमाया कि *''निर्भय अवस्था के बिना भक्ति नहीं हो पाएगी। भय को कैसे दूर किया जा सकता है? हमारी दृष्टि में कुछ भी असत्य, छल, कपट है तो हमारा मन भयभीत होता रहेगा। हमारे भीतर सत्यता, ईमानदारी है तो मन में भय पैदा नहीं होगा। मन निर्भय होता रहेगा, क्योंकि उसमें अभय की भावना का संचार होगा। दूसरी बात है द्वेष। भक्ति करने बैठे किंतु रुचि नहीं है। द्रव्य से परमात्मा के निकट बैठे होंगे किंतु भावों से दूर होंगे। यदि लंबे समय तक परिणाम नहीं मिले तो मन खिन्न व खेदित नहीं होना चाहिए। धैर्य इतना गहरा होना चाहिए कि एक जन्म नहीं, जन्म-जन्मातर बीत जाएँ तो भी भक्ति नहीं छोड़ूँगा। हम जल्दी अधीर हो जाते हैं कि इतने समय तक धर्माराधना की, भक्ति की, परंतु परिणाम नहीं मिले। व्यापार में, नींद लेने में कितना समय व्यर्थ किया और भक्ति में कितना समय उपयोग किया, इसका आत्मचिंतन करना चाहिए। भक्ति के लिए अपने आपको पूरे भावों के साथ समर्पित करना होता है। उसमें निर्भयता होनी जरूरी है। कोई भय नहीं और कोई द्वंद्व नहीं होना चाहिए। मोह को हटाने से मोक्ष मिलेगा। इस मनुष्य जन्म से मोक्ष पाया जा सकता है।''*

साध्वीवर्याओं ने गुरुभक्ति प्रस्तुत किया। सामायिक, स्वाध्याय, दया, संवर सहित अनेक त्याग-प्रत्याख्यान में लोगों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया।

मुमुक्षु प्रणिता जी बाफना की दीक्षा 9 जून के लिए घोषित

25 दिसंबर 2023, मल्हारगढ़। मौसम परिवर्तनशील है, लेकिन चारित्रात्माएँ अपनी चर्या में दृढ़ प्रतिज्ञ हैं। प्रात: प्रार्थना पश्चात् परम श्रद्धेय आचार्य भगवन् का जय-जयकारों के साथ मल्हारगढ़ जैन स्थानक, गांधी चौक में मंगलमय पदार्पण हुआ। महापुरुषों के आगमन से जैन-जैनेतर हर्षित हो गए। दिनभर दर्शनार्थी गुरुभक्तों का ताँता लगा रहा। ज्ञानचर्चा, धर्मबोध के साथ ही आचार्य भगवन् ने आशीर्वाद स्वरूप मंगलपाठ फरमाया।

मुमुक्षु बहिन प्रणिता जी बाफना सुपुत्री श्री बसंत जी-निर्मला जी बाफना, परसोदा, दुर्ग (छ.ग.) की जैन भागवती दीक्षा हेतु परिजनों ने अनुज्ञा-पत्र गुरुचरणों में सहर्ष समर्पित किया। अनुज्ञा-पत्र का पठन झुमरलाल जी बाफना ने एवं प्रतिज्ञा-पत्र का पठन मुमुक्षु बहिन प्रणिता जी बाफना ने किया।

आचार्य भगवन् ने मानव जीवन का सार संयम निरूपित करते हुए मुमुक्षु बहिन प्रणिता जी बाफना की दीक्षा **09 जून 2024** के लिए घोषित की। जय-जयकारों व जयवंता-जयवंता गीत से संपूर्ण माहौल भक्तिमय बन गया।

गुरुदर्शन-सेवा सर्वोपरि

26 दिसंबर 2023, ई-अश्व ऑटोमोटिव, मुंडली। जैन स्थानक, गांधी चौक में सामूहिक मंगलमय प्रार्थना में देव-गुरु-धर्म के प्रति भक्ति कर अनेक भाई-बहिनों ने अपना जीवन धन्य बनाया। शासन दीपिका साध्वी श्री निष्ठा श्री जी म.सा., साध्वी श्री खंतिप्रिया श्री जी म.सा., साध्वी श्री रिभिता श्री जी म.सा. आदि साध्वीवृंद ने गुरुदर्शन-सेवा का लाभ लेकर धर्मतत्त्व की गहन चर्चा की। प्रत्येक पूर्णिमा को आचार्य भगवन् के पावन दर्शन करने के नियम का पालन करने वाले अनेक स्थानों के गुरुभक्तों ने गुरुचरणों में उपस्थित हो दर्शन, वंदन कर ज्ञानचर्चा का लाभ लिया। शाम को आचार्य भगवन्

सहित संतरत्नों का हर्षित जी भंडारी व नरेंद्र जी खिंदावत के प्रतिष्ठान ई-अश्व ऑटोमोटिव में जय-जयकारों के साथ मंगलमय पदार्पण हुआ। रात्रि में ज्ञानचर्चा का कार्यक्रम आयोजित किया गया।

आचार्य भगवन् ने किसी से अनबन होने पर सोने से पहले क्षमायाचना करने की समझाइश दी।

मुंडली से विहार कर चल्दू की धरा की पावन

27 दिसंबर 2023, चल्दू। व्यसनमुक्ति एवं संस्कार जागरण के पुरोधा आचार्य भगवन् का अपनी शिष्य मंडली सहित चल्दू में तख़तसिंह जी शक्तावत के निवास स्थल पर मंगल पदार्पण हुआ। **'त्रिशला नंदन वीर की, जय बोलो महावीर की'**, **'जय-जयकार जय-जयकार, राम गुरु की जय-जयकार'** से संपूर्ण मार्ग गुँजायमान हो रहा था। यहाँ आयोजित धर्मचर्चा का अनेक स्थानों के श्रद्धालुओं ने लाभ लिया।

वेश बदलना नहीं, जीवन बदलना साधना है

28 दिसंबर 2023, आर.बी.एस. कॉलेज, नीमच रोड। प्रात:कालीन मंगलमय प्रार्थना में पंच परमेष्ठी का ध्यान करने के पश्चात् परम पूज्य आचार्य प्रवर आदि ठाणा का चल्दू से आर.बी.एस. कॉलेज में जय-जयकारों के साथ मंगल प्रवेश हुआ। प्रवेश पश्चात् यहाँ आयोजित धर्मसभा को संबोधित करते हुए साधना के शिखर पुरुष आचार्य भगवन् ने अपनी दिव्यदेशना में फरमाया कि *''सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि हमें हमारी पहचान नहीं है। मैं कौन हूँ? 'आई जैन माई जैन' एक प्रकल्प है, जो हमें बताता है कि मैं जैन हूँ, मैं आत्मा हूँ। आत्मा और जैनत्व का परस्पर गहरा संबंध है। हम कैसा जीवन जी रहे हैं, यह बात जैनत्व को दर्शाता है। सरल, सत्य व्यवहार करना जैनत्व की पहचान है। यदि हम जैनत्व की राह पर चलते हैं तो कोई तनाव नहीं है। जब हम स्वार्थ, मोह, मेरेपन में डूबते जाते हैं तो मन में तनाव पैदा होता है और यह तनाव हमें असहज बना देता है। सरल, सत्य व्यवहार रखेंगे तो जीवन में दिखावा, प्रदर्शन, आडंबर नहीं रहेगा। कुछ भी छिपाने की आवश्यकता नहीं रहेगी। ईमानदारी से जीवनचर्या होनी चाहिए। छल, कपट दिखावे से भरा अस्वाभाविक जीवन जीते हैं तो भावों की गाँठें पड़ जाती हैं। ये गाँठें हमारे जीवन को संकुचित करती है। जैनत्व का अर्थ होता है गाँठें खोलना। ऐसा करेंगे तो हम भी एक दिन वीतरागी बन जाएँगे। अपने स्वभाव को बदलना बहुत कठिन काम है। केवल वस्त्र बदलना साधना नहीं है, अपितु जीवन को बदलना साधना है। छोटे-छोटे संकल्पों से हम अपने जीवन को बदल सकते हैं।''*

जैसे ही आचार्य भगवन् ने **मुमुक्षु मोक्षा जी भंडारी, रतलाम** की जैन भागवती दीक्षा **05 फरवरी** के लिए उद्घोषित की संपूर्ण सभा जय-जयकारों से गूँज उठी। आचार्य भगवन् ने किसी से अनबन होने पर सोने से पहले क्षमायाचना करने की समझाइश दी।

श्री हर्षित मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि छोटी-छोटी चीजों से पूर्णता प्राप्त होती है, पर पूर्णता कोई छोटी चीज नहीं है। सुनना सरल है, पर जीवन में उतारना कठिन है। जीवन में हमारा कदम ऐसा बढ़े कि जिनशासन, पूज्य गुरुदेव और परिवार का नाम रोशन हो।

मुमुक्षु मोक्षा जी भंडारी ने प्रतिज्ञा-पत्र का पठन करते हुए कहा कि जो सोचा नहीं था, वो हो गया। संयम का पथ मुझे भा गया। गुरुदेव के हाथ में ही मेरी जीवन डोर है। वे ही मुझे मोक्ष की ओर ले जाएँगे। गुरु भगवन् एवं परिजनों का मेरे ऊपर असीम उपकार है।

वीर पिता निर्मल जी भंडारी ने अनुज्ञा-पत्र का पठन किया और वीर परिवार की ओर से गुरुचरणों में समर्पित किया गया। संपूर्ण सभा जयनादों से गूँज रही थी। मुमुक्षु बहिन का परिचय महेश जी नाहटा ने दिया।

पूरी दुनिया में हम ही हमारा नुकसान कर सकते हैं, दूसरा कोई नहीं। एक ऐसी योग्यता जो श्रावक जीवन और साधु जीवन में होनी चाहिए वह है आत्मलक्षिता।

'**आई जैन माई जैन**' शिविर की 153 बालिकाओं ने शिविर टीम के साथ गुरुदर्शन-सेवा का लाभ लिया। आचार्य भगवन् ने जिज्ञासाओं के सुंदर समाधान दिए। शिविरार्थी बालिकाओं ने अपने अनुभव साझा किए। नवकार ग्रुप ने गीतिका प्रस्तुत की। बहिनों ने 15 मिनट स्वाध्याय करने का नियम लिया। अन्य कई शुभ संकल्प हुए। मुमुक्षु सुरेश जी पामेचा, नीमच संघ अध्यक्ष जी एवं पूर्व राष्ट्रीय महामंत्री जी सहित अनेक स्थानों के गुरुभक्तों ने दर्शन-सेवा का लाभ लिया। आर.बी.एस. कॉलेज के संस्थापक श्री गोयल जी एवं अन्य अनेक लोगों ने व्यनसमुक्ति का संकल्प लिया। दोपहर में ज्ञानचर्चा एवं प्रश्नोत्तरी आदि हुए। वीर माता पूनम जी भंडारी ने मोक्षा के उज्ज्वल भविष्य की मंगलकामना की।

आत्मशक्ति को जागृत करें

दोपहर में संजीत में बहुश्रुत, वाचनाचार्य उपाध्याय प्रवर श्रद्धेय श्री राजेश मुनि जी म.सा. ने मुमुक्षु मोक्षा जी भंडारी, वीर भंडारी परिजन, आई जैन माई जैन की शिविरार्थी बालिकाओं एवं अन्य अनेक लोगों को प्रतिबोध प्रदान करते हुए जैन स्थानक में अपनी सिंह गर्जना के साथ दिव्यदेशना देते हुए फरमाया कि ''**संयम जीवन राजा जीवन होता है। संयम जीवन में सच्चा सुख है। आत्मा में इतनी शक्ति होती है कि वह संयम स्वीकार कर सकती है। अपनी आत्मशक्ति को जागृत करना चाहिए। हमारी गति मोक्ष की ओर होनी चाहिए। इस जगत् में सबसे बड़े गुरु भगवान महावीर स्वामी हैं। जैन धर्म को आत्मसात् करके यह महसूस करें कि जैनत्व मेरा धर्म है। जितना लगाव धर्म में है उतना लगाव दुनिया की किसी अन्य चीज में नहीं होना चाहिए। गुरु एवं धर्म के प्रति जो निष्ठा है वह निष्ठा कभी कमजोर नहीं होनी चाहिए। ब्रह्मचर्य जितना ऊँचा होगा उतने ही विचार ऊँचे होंगे। इच्छाओं को जितना सीमित करेंगे उतने ही सुखी होते चले जाएँगे। जितनी अधिक सुविधाएँ होंगी उतने ही दु:ख बढ़ेंगे। सत्य को प्रतिष्ठित करने की जिम्मेदारी हमारी है। पूरी दुनिया में हम ही हमारा नुकसान कर सकते हैं, दूसरा कोई नहीं। एक ऐसी योग्यता जो श्रावक जीवन और साधु जीवन में होनी चाहिए वह है आत्मलक्षिता।**''

जीवन को आगे बढ़ाने का मार्ग हैं सहनशीलता और क्षमाशीलता

29 दिसंबर 2023। आत्मलीनता से सराबोर प्रात:कालीन मंगलमय प्रार्थना से जीवन को पावन करने के पश्चात् परमागम रहस्यज्ञाता आचार्य भगवन् सहित सान्निध्यवर्ती संतरत्नों का आर.बी.एस. कॉलेज, नीमच रोड से भाटखेड़ा की ओर विहार हुआ। मार्ग में जैन-जैनेतर जन संयम शक्ति के साक्षात् दर्शन कर धन्य हो, जय-जयकार व कृतज्ञता से अपना जीवन धन्य बना रहे थे। आपश्री जी का अपने शिष्य समुदाय सहित दशरथ जी राठौड़ के निवास स्थान पर मंगलमय पदार्पण हुआ। आचार्य भगवन् ने सहनशीलता और क्षमाशीलता को जीवन में आगे बढ़ाने की प्रेरणा दी एवं उपस्थित जनसमूह की जिज्ञासाओं का तार्किक समाधान किया। व्यसनमुक्ति एवं संस्कार जागरण के

कार्यक्रम हुए। राजपूत समाज के भाई-बहिनों ने सेवा-भक्ति का सराहनीय उदाहरण प्रस्तुत किया।

मुमुक्षु बहिन मोक्षा जी भंडारी ने गुरु भगवंत व पारिवारिकजनों की असीम कृपा को जीवन की अमूल्य धरोहर बताया। उपाध्याय प्रवर के मुखारविंद से अनेक भाई-बहिनों ने दीक्षा लेने वाले को अंतराय नहीं देने, प्रतिदिन 15 मिनट धार्मिक पुस्तक पढ़ने, जब तक घर से या नजदीकी परिवार से कोई दीक्षा नहीं होगी तब तक बादाम की कतली का त्याग आदि संकल्प कई भाई-बहिनों ने ग्रहण किए। शिविरार्थी बहिनों ने भी विभिन्न संकल्प लिए।

एक अलग कार्यक्रम में सकल जैन संघ, संजीत की ओर से मुमुक्षु बहिन मोक्षा जी भंडारी एवं मुमुक्षु बहिन चहेती जी मुणत, रतलाम का शॉल ओढ़ाकर अभिनंदन किया गया।

विहार से जन-जन पावन

30 दिसंबर 2023। चरैवेति-चरैवेति की उक्ति को चरितार्थ करते हुए संत-सतीवृंद चातुर्मास पश्चात् अनवरत विहार में संलग्न हैं। आपश्री जी अपने विहार के माध्यम से जन-जन के जीवन में क्षमा और करुणा के भाव जागृत कर जीवमात्र को अभयदान देने की मार्मिक अपील कर रहे हैं। विहार के क्रम में आचार्य प्रवर का अपनी शिष्य संपदा सहित चौथखेड़ा स्थित आज्ञा एंटरप्राइजेज में मंगल प्रवेश हुआ। विहार का संपूर्ण मार्ग जय-जयकारों की नाद से गूँज रहा था। मंगल प्रवेश पश्चात् उपस्थित अपार जनसमूह को आचार्य भगवन् के मुखारविंद से आशीर्वाद स्वरूप मंगलपाठ श्रवण का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस अवसर पर व्यसनमुक्ति के प्रत्याख्यान भी हुए। ठाकुर, राजपूत समाज की सेवाएँ अत्यंत ही सराहनीय रही।

श्री हर्षित मुनि जी म.सा. ने त्याग-नियम, प्रत्याख्यान के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए नियमों को दृढ़ता से पालने की प्रेरणा दी। नवकार महामंत्र का सामूहिक जाप किया गया।

आत्मद्रष्टा बनें

31 दिसंबर 2023। चौथखेड़ा में रविवारीय समता शाखा की विशिष्ट आराधना हुई। छोटा स्थान होते हुए भी साधकों की आशातीत उपस्थिति रही। समता शाखा में आराधना पश्चात् युगनिर्माता आचार्य भगवन् आदि ठाणा-4 का चौथखेड़ा से विहार कर तिरुपति नगर में रमेश जी शर्मा के निवास नीमच रोड में जय-जयकारों के साथ मंगल पदार्पण हुआ। प्रवेश पश्चात् आचार्य भगवन् ने संवेग, निर्वेग भावना को आगे बढ़ाने एवं संयम में पुरुषार्थ जगाने की अद्भुत प्रेरणा दी।

यहाँ पर अनेक क्षेत्रों से पधारे गुरुभक्तों ने आचार्य प्रवर के पावन दर्शन कर आत्मतृप्ति का अनुभव किया। खोर संघ की ओर से 05 फरवरी का दीक्षा प्रसंग प्रदान करने हेतु विनती-पत्र गुरुचरणों में प्रस्तुत किया गया। ज्ञानचर्चा, प्रश्नोत्तरी आदि धार्मिक आयोजन हुए। आचार्य भगवन् ने असीम कृपा कर मंगलपाठ फरमाया।

बहुश्रुत, वाचनाचार्य उपाध्याय प्रवर श्री राजेश मुनि जी म.सा. आदि ठाणा-3 का चपलाना से विहार कर महागढ़ स्थानक भवन में मंगल प्रवेश हुआ। दोपहर में प्रभावशाली अमृतवाणी से जन-जन को पावन करते हुए आपश्री जी ने फरमाया कि **''यदि आत्मदृष्टि को जान लिया तो हम सुख और शांति को प्राप्त कर सकते हैं। आज हम सुख व शांति को शरीर और संबंधों में खोजने की कोशिश करते हैं। हमने बाहरी वैभव एवं विलासिता को ही सब कुछ मान लिया है। शरीर व संबंध स्थायी सुख नहीं दे सकते। जब तक मानव आत्मद्रष्टा नहीं बनेगा तब तक सच्चे सुख व शांति की अनुभूति नहीं हो सकती। भगवान का शासन मिलना, मानव तन मिलना, चेतना मिलनी संभव है, लेकिन ये**

सब मिलने के बाद भी आत्मा को पहचान पाए? दुर्लभ मानव जीवन बार-बार मिलना मुश्किल है। आत्मद्रष्टा बनना ही पड़ेगा तभी भगवान महावीर का शासन मिलने, जिनवाणी श्रवण करने एवं गुरु-भगवंतों का सान्निध्य पाने के बाद हम आत्मा को पहचान पाएँगे। क्षणिक सुख-शांति में फँसे रहे तो ये सबसे बड़े दुःखों के कारण हैं।''

आपश्री जी के पावन सान्निध्य में सुषमा जी बरड़िया-रायपुर के 108 तेला सहित अनेक जनों ने विभिन्न प्रत्याख्यान ग्रहण किए। राष्ट्रीय अध्यक्ष जी सहित अनेक पदाधिकारीगणों व श्रद्धालुओं ने गुरुदर्शन-सेवा का लाभ लिया।

तपस्या सूची	
श्रावक-श्राविका वर्ग	
आजीवन शीलव्रत	अशोक जी शीला जी जैन, महेंद्र कुमार जी ज्योत्सना जी जैन-नगरी, मोहनसिंह जी लक्ष्मीकुँवर जी राजावत, सुरेश जी राजकुमारी जी कच्छारा, पूर्व प्राचार्य श्यामलाल जी सुशीला देवी बोराना, जगदीश जी दुर्गा देवी पोरवाल, प्रकाशचंद जी पार्वती देवी गुप्ता
उपवास	**9-** प्रीति जी जैन-पिपलियामंडी, समरथमल जी पामेचा-पिपलियामंडी, कुसुमलता जी कांठेड़-जावद, मोनिका जी कच्छारा-पिपलियामंडी **अठाई-** जितेंद्र जी खिंदावत-पिपलियामंडी, नीता जी खिंदावत-पिपलियामंडी, मधु जी चौहान-पिपलियामंडी
वर्षीतप	अल्का जी मारू-बड़ीसादड़ी
आयंबिल	**72-** तेजमल जी पामेचा-पिपलियामंडी **31-** निर्मला जी खिंदावत-पिपलियामंडी (31 संवर भी)
पक्की नवकारसी	**300-** मंजू जी नलवाया-पिपलियामंडी
गाथा का स्वाध्याय	**1 लाख 51 हजार-** सुभद्रा देवी पामेचा-पिपलियामंडी **1 लाख-** रायकंवरी जी भंसाली-दिनहट्टा

-महेश नाहटा श्रमणोपासक

श्रमणोपासक के बाल पाठकों के लिए नववर्ष पर एक सुनहरा अवसर

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ के मुखपत्र श्रमणोपासक में **'बालसुलभ भाव'** नाम से नवीन कॉलम की शुरुआत की जा रही है। इस हेतु बच्चों द्वारा स्वलिखित रचनाएँ उनके नाम के साथ प्रकाशित की जाएगी। यह क्रम प्रतिमाह के धार्मिक अंक में रहेगा। तो उठाइए अपनी कलम और गुरु, धर्म, संस्कार, समर्पण, संघ विषयक लेख, कविता, कहानी, रूपक हिंदी व अंग्रेजी भाषा में लिखकर हमें अतिशीघ्र ही वॉट्सएप नं. 9314055390 एवं ईमेल : news@sadhumargi.com पर भिजवा दें।

-श्रमणोपासक टीम

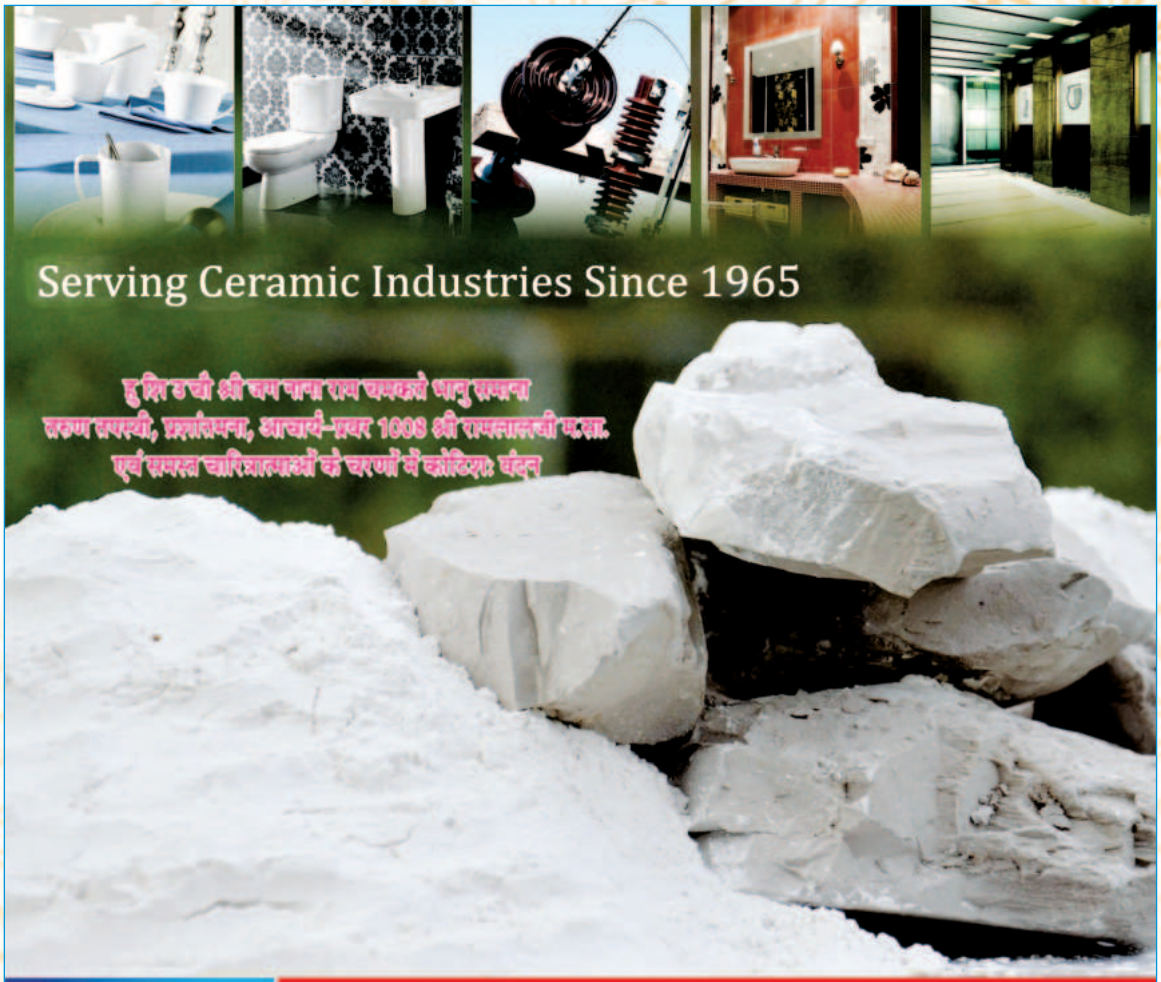

A Premier Clay Specialists in The Country...

- 48 years of experience with efficient processing technology and high-quality deposits of raw materials.
- Extraction, Processing and Refining of industrial minerals, particularly Ball Clay, China Clay, Bentonite, Silica Sand, Quartz, Potassium & Sodium Feldspar.
- In-depth knowledge of the market and understands the need for high-grade raw materials in the ceramic industries.
- Extraction of raw materials to the final delivery of the finished product, all of our procedures are subjected to ongoing quality monitoring.
- Export good quantity of minerals to various countries.
- Import of many others minerals and raw materials for Indian ceramics industries.

JLD MINERALS
Jaichand Lal Daga group

Corporate Office :
1st Floor, Labhuji Ka Katla,
Bikaner-334001, Rajasthan, INDIA

Phone : +91-151-2220380 / 2521624 / 3294234
FAX : +91-151-2522768, Mobile No. 09829217944
Email : wbcclay@yahoo.com

www.jldminerals.com

स्वर्ण पदचिह्न छोड़ते जा रहे मुमुक्षु भाई-बहिन

जावद (म.प्र.) में 22 जनवरी 2024 को परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा. के मुखारविंद से जैन भागवती दीक्षा संभावित

मुमुक्षु श्री हितेश जी कांकरिया
सुपुत्र
हेमकरण जी-ऊषा जी कांकरिया
धामणगाँव रेलवे
(महाराष्ट्र)

मुमुक्षु सुश्री रिया जी डागा
सुपुत्री
लालचंद जी-मधु जी डागा
कोलकाता
(प. बंगाल)

मुमुक्षु श्री यश जी कोटड़िया
सुपुत्र
दिनेश जी-जयश्री जी कोटड़िया
नंदुरबार
(महाराष्ट्र)

मुमुक्षु सुश्री प्रनिधि जी पारख
सुपुत्री
ललित जी-स्नेहा जी पारख
बेलगाँव, राजनांदगाँव
(छत्तीसगढ़)

मुमुक्षु श्रीमती कमलादेवी चंडालिया
धर्मपत्नी
स्व. श्री समरथमल जी चंडालिया
कपासन, चित्तोड़गढ़
(राजस्थान)

राम चमकते भानु समाना

मुमुक्षु सुश्री आर्ची जी नाहर
सुपुत्री
राजेश जी-सुषमा जी नाहर
बेगूँ, चित्तोड़गढ़
(राजस्थान)

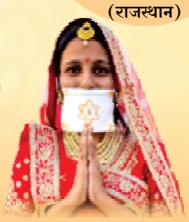

मुमुक्षु सुश्री द्विवंकल जी कामदार
सुपुत्री
स्व. श्री गिरिश जी-श्वेता जी
कामदार, आदिलाबाद
(तेलंगाना)

मुमुक्षु सुश्री काजल जी पितलिया
सुपुत्री
विजयेंद्र जी-संगीतादेवी पितलिया
बेंगलुरु
(कर्नाटक)

मुमुक्षु सुश्री अंकिता जी बाफणा
सुपुत्री
अनिल जी-शोभा जी बाफणा
शिरूर
(महाराष्ट्र)

संक्षिप्त परिचय

मुमुक्षु सुश्री मोक्षा जी भण्डारी

नाम	:	मुमुक्षु सुश्री मोक्षा जी भण्डारी
निवास स्थान	:	रतलाम (म.प्र.)
जन्म तिथि	:	05 फरवरी 2004
वैराग्यकाल	:	लगभग 2 वर्ष
पद विहार	:	लगभग 500 किमी.
व्यावहारिक शिक्षा	:	बारहवीं
धार्मिक अध्ययन	:	पुच्छिंसु णं, उववाई सूत्र की 22 गाथाएँ, श्री दशवैकालिक सूत्र अध्ययन 1-5 व 9-10 चूलिकाएँ, श्री उत्तराध्ययन सूत्र 1-4, 9-11, 26, 39, 32, तत्त्वार्थ सूत्र, भक्तामर, **थोकड़े-** जैन सिद्धांत बत्तीसी, गमक, गति आगति, लघुदण्डक, जीवधड़ा, अष्ट प्रवचन माता, 67 बोल, 102 एवं 98 बोल का बासठिया, जीव पर्याय, अजीव पर्याय, कर्मग्रन्थ एवं अन्य थोकड़े।
धार्मिक परीक्षाएँ	:	जैन सिद्धांत भूषण, कोविद, विभाकर (2)
तपाराधना	:	9 एवं तेला
संभावित दीक्षा तिथि	:	05 फरवरी 2024

पारिवारिक परिचय

पड़दादा जी-दादी जी	:	स्व. श्री वागमल जी-स्व. श्रीमती पानबाई भण्डारी
दादा जी-दादी जी	:	स्व. श्री रमेशचंद्र जी-श्रीमती संतोषबाई भण्डारी
पिता जी-माता जी	:	निर्मल जी-पुनम जी भण्डारी
बड़े पिता जी-माता जी	:	राजेश जी-रेखा जी, संजय जी-शीतल जी भण्डारी
भाई-भाभी	:	आयुष जी-चेलसी जी भण्डारी, तन्मय जी-विरती जी गाँधी
बहन-बहनोई	:	याशिका जी-हर्ष जी कांसवा, वैशाली जी-चर्चित जी भण्डारी
भाई, बहिन	:	शौर्य जी, निर्झर जी, वंदन जी, समकित जी, वीरम जी, सौम्या जी, प्रियल जी
भतीजी, भतीजा, भांजा	:	संयति, नित्यम, रेयांश
भुआ जी-फूफा जी	:	संगीता जी-एकेंद्र जी गाँधी, रजनी जी-जम्बू जी पितलिया
नाना जी-नानी जी	:	वर्धमान जी-चंदनबाला जी पितलिया
मामा जी-मामी जी	:	विकास जी-संध्या जी पितलिया
मौसी जी-मौसा जी	:	मिताली जी-ऋषभ जी भण्डारी

SIPANI
RITZY. POETIC. URBANE

CONTRIBUTING TOWARDS THE CANCER TREATMENT

PATIENT ROOM

RECEPTION HALL WITH PARENTS' PHOTO

RK Sipani and Daga Family donated a 390 bed charitable hospital for the poor and needy at KIDWAI Memorial Institute of Oncology.

The block was inaugurated by Shri Kumaraswamy, the honourable Chief Minister of Karnataka on 22nd Dec 2018.

We look forward to contributing to a better world with our upcoming charitable ventures.

RK Sipani Foundation

#439, 18th Main, 6th Block, Koramangala, Bangalore - 560 095
Contact: Prakash 9448733298, Sipani Office: 08041158525 | Email: sipanigrand@gmail.com

संघ से संबंधित विभिन्न जानकारियां

प्रकाशक

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

प्रधान कार्यालय

समता भवन, आचार्य श्री नानेश मार्ग,
नोखा रोड, गंगाशहर, बीकानेर-334401
(राज.) फोन : 0151-2270261
helpdesk@sadhumargi.com

अध्यक्ष एवं प्रधान संपादक

नरेन्द्र गांधी, जावद

सह संपादिका

श्रीमती मोनिका जय ओस्तवाल, ब्यावर

श्रमणोपासक सदस्यता

केवल भारत में	1,000/- (15 वर्ष के लिए)
विदेश हेतु	15,000/- (10 वर्ष के लिए)

वाचनालय हेतु (केवल भारत में)

वार्षिक	50/-

संघ सदस्यता

साधारण सदस्यता	500/-
आजीवन सदस्यता	5,000/-

साहित्य सदस्यता

15 वर्ष	(केवल भारत में)	3,000/-

संघ केन्द्रीय कार्यालय के विभिन्न विभागों से कार्य सम्पादन हेतु सम्पर्क करें :-

E-mail : ho@sadhumargi.com

बैंक खाता विवरण

Shree Akhil Bharatvarshiya Sadhumargi Jain Sangh, Bikaner

State Bank of India

SCAN & PAY

Account No. : 31264126681
IFSC Code : SBIN0003401
Branch : G.S. ROAD, Bikaner
Mob. : 7073311108
E-mail : **accounts@sadhumargi.com**

व्हाट्सएप और ई-मेल आईडी

श्रमणोपासक	: 9799061990	news@sadhumargi.com
श्रमणोपासक समाचार	: 8955682153	news@sadhumargi.com
साहित्य	: 8209090748	: sahitya@sadhumargi.com
महिला समिति	: 6375633109	: ms@sadhumargi.com
समता युवा संघ	: 7073238777	: yuva@sadhumargi.com
धार्मिक परीक्षा	: 7231933008	examboard@sadhumargi.com
कर्म सिद्धान्त	: 7976519363	examboard@sadhumargi.com
परिवारांजलि	: 7231033008	: anjali@sadhumargi.com
विहार	: 8505053113	: vihar@sadhumargi.com
पाठशाला	: 9982990507	: Pathshala@sadhumargi.com
शिविर	: 7231833008	: udaipur@sadhumargi.com
ग्लोबल कार्ड अपडेशन	: 6265311663	: globalcard@sadhumargi.com

-: सूचना :-

निवेदन है कि किसी भी कार्य के लिए सम्बंधित विभाग से ही सम्पर्क करें। इससे आपका कार्य सुगम और त्वरित गति से हो सकेगा।

कार्यालय समय – प्रात: 10:00 से सायं 6:30 बजे तक
लंच – दोपहर 1:00 से 1.45 बजे तक

आवश्यक सूचना

सभी संघ सदस्यों से निवेदन है कि कृपया कोई भी नकद भुगतान (Cash Payment) श्री संघ के किसी भी सदस्य, कार्यालय अधिकारी को किसी भी प्रवृत्ति में करें तो केन्द्रीय कार्यालय के लेखा विभाग (Accounts Department) को सूचना जरूर देवें। इससे आपको पक्की रसीद शीघ्र ही भिजवाई जा सकेगी।

मो.न. 7073311108 पर व्हाट्सएप करें।

जय गुरु नाना

जय महावीर

जय गुरु राम

YOUR TRUST

FLEXIBILITY IS OUR STRENGTH

RAKSHA SHAND GROUP

SINCE 1977

RAKSHA® PIPES

OUR GUARANTEE

INDIA'S MOST TRUSTED BRAND

FIRST IN INDIA

ISI FITTINGS WITH ADVANCED CO-MOULDED DURO RING SEAL

Sri Shantilal, Sanjay, Ajay & Tushar Shand

SHAND GROUP OF INDUSTRIES

No. 52, 7th Cross, Wilson Garden, Bengaluru - 560027.INDIA

Phone: +91-80-22235726, 22271902, 22225734.

Fax: +91-80-22234779. E-mail: mkt@shandgroup.com

RAKSHA FLO

P.T.M.T TAPS & ACCESSORIES

Diamond® Duroflex

Diamond® DUROLON

DURO RING

LEAK PROOF

NSF/ANSI/CAN 61 IAPMO-I

ENVIRONMENT FRIENDLY LEAD FREE

UV STABILIZED

Now with new M.R.O. Technology Resists high Impact

IS 15778 : 2007 ISI CM/L NO : 2526149

cftri CERTIFIED

LUCALOR FRANCE

www.shandgroup.com रक्षा – जीवन भर की सुरक्षा www.rakshapipes.com

रचनाकारों अथवा लेखकके विचारों से संपादक की सहमति होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र बीकानेर ही रहेगा।

प्रधान सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक नरेन्द्र गांधी के लिए जैन आर्ट प्रेस, बीकानेर के लिए साक्षी प्रिंटर्स, जयपुर (राज.) में मुद्रित प्रतियाँ 25000

प्रेषक : श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

समता भवन, आचार्य श्री नानेश मार्ग, नोखा रोड, गंगाशहर, बीकानेर-334401 (राज.), फोन नं. 0151-2270261

www.facebook.com/HOSadhumargi @absjainsangh